द्वितीय अध्याय

अंग्रेजी नाट्यशिल्प एवं [illegible]

अध्याय तृतीय

अंजोदीदी का नाट्य शिल्प एवं मंचीयता ---

शिल्प-विधि --

शिल्प-विधि अंग्रेजी के 'टेक्नीक' शब्द का हिंदी रूपांतर है। इसके लिए हिंदी साहित्य में शिल्प-विधि के लिए रचना-तंत्र, रचना-विधान, रचना-पध्दति, शिल्पविधान आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं। कोई कृति जिन रीतियों एवं पध्दतियों द्वारा रूपायित होती है उन्हें भी समग्रता में 'शिल्प-विधि' कहा जाता है।

'मार्क शोरेर' ने लिखा है, कि 'अनुभूति और रूपायित अनुभूति के अंतर को शिल्प कहते हैं।'[१] शिल्प की विवेचना करते हुए जी.बी. हिक्स ने लिखा है -- 'शिल्प से मेरा तात्पर्य उस रीति से है, जिसके द्वारा रचनाकार मूल विषय को रूपायित करके भावक के सम्मुख प्रस्तुत करता है।'[२]

डॉ. सत्यपाल बुध के मतानुसार 'विषय वस्तु को कलारूप में ढालने (या उसके ढल जाने) की प्रक्रिया को 'शिल्प-विधि कहते हैं।.... कोरे वस्तु तत्व को विभिन्न पध्दतियों से ढाले दिये जाने के बाद जब आस्वाद्य स्वरूप मिल जाता है तब वह कला-रूप बन जाता है और इस स्वरूपतक पहुँचाने की प्रक्रिया इसमें प्रयुक्त विभिन्न उपकरणों के अन्तरावलंबित विविध उपस्थापन ही शिल्प-विधि है। नाटक रचना में जिस प्रक्रिया से संवेदनानुभूति उसके विभिन्न तत्वों कथावस्तु, पात्र आदि में परिणत होकर नाटकीय रूप निर्माण करती है, वहीं नाट्य शिल्प है।

---

१ मार्क शोरेर - फार्म आव मॉडर्न फिक्शन - पृ.९।

२ जी.बी. हिक्स - द लिविंग नावेल - पृ.१२१।

प्रत्येक रचना की शिल्प-विधि उसकी वस्तु द्वारा प्रेरित, निर्दिष्ट एवं निश्चित होती है। किसी भी रचना का शिल्प पूर्व निश्चित नहीं होता। कोजलेको का मत है कि अंत में शिल्प अपना चिन्ह भी नहीं रहने देता, साध्य के लिए केवल साधन बनकर रह जाता है।[1]

सारांश - यह है, कि शिल्प-विधि की सार्थकता उसकी विषयानुकूल और प्रभावपूर्ण प्रेषणीयता में निहित है।

नाट्य शिल्प परिवर्तनशील है। युग-मूल्यों के अतिरिक्त साहित्यकार के व्यक्तिगत संस्कार, विषय-वैशिष्ट्य और प्रदर्शन के माध्यम भी नाट्य-शिल्प को प्रभावित करते हैं। नाटक की शिल्प-विधि को युगीन विचारों, रुचियों एवं रंगमंचीय साधनों के अनुरूप बनाना चाहिए। साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा नाटक में शिल्प का महत्व अधिक है। नाटक में शिल्प की महत्ता के कई कारण हैं। यह सीमाओं की कला है, साहित्य के किसी भी रूप पर इतने बंधन नहीं हैं। नाटक दृश्य-काव्य है। दृश्यत्व जहाँ इसकी विशेषता है, वहीं इसकी सीमा भी।[2]

नाटक के तत्व --

संस्कृत आचार्यों ने 'वस्तुनेता रसस्तेषाम् भेदक :' के अनुसार नाटक के तीन तत्व स्वीकार किये हैं - वस्तु, नेता, रस। हिंदी के आलोचक भी मौलिक निरूपण का प्रयास न कर इन्हीं को तत्व मानते हैं। वस्तुत: इन्हें तत्व मानना भ्रम है। ये तो वे आधार हैं जिनके सहारे रूपक का भेद किया गया है।[3] नाट्यशास्त्र में इनकी कहीं भी प्राप्त नहीं होती। नाट्य-संग्रह की जो तेरह विधियाँ बतलायी गयी हैं, उसमें भी वस्तु, नेता तथा रस का उल्लेख नहीं मिलता।[4]

पाश्चात्य नाट्यशास्त्र के आचार्यों के मतानुसार नाटक के छ: तत्व हैं --

---

१ विलियम कोजलेको - द वन ऐक्ट प्ले - पृ. २३।

२ डॉ. सिध्दकुमार - हिंदी एकांकी की शिल्प-विधि का विकास - पृ. २६।

3 धनिक कृत - दशरूपक की टीका।

४ भरतमुनि - अ - ६। १०-११।

कथानक, पात्र,संवाद,देशकाल,भाषाशैली,उद्देश्य । हिंदी के अधिकांश आलोचक इन्ही तत्वोंके आधारपर हिंदी नाटकों की आलोचना प्रस्तुत करते हैं ।

परंतु 'समस्या नाटककार अश्क ' - डॉ.उमाशंकर सिंह ' के अनुसार नाटक के मूल तत्व चार हैं - कथावस्तु, पात्र,संवाद और अभिनेयता । पाश्चात्य और पूर्वीय विद्वानों द्वारा गिनाये गये सभी तत्व इन्ही के अंतर्गत आते हैं ।

कथावस्तु --

'नाटकों की वस्तु-रचना में कथावस्तु के रूप में दो तत्वों का समन्वय हैं, कार्य और चरित्र जिसको कथावस्तु और पात्र भी कह सकते हैं ।'[१] कथावस्तु में एक ओर जीवन की क्रियाशीलता का रूप हैं, तो दूसरी ओर चरित्र का विकास ।

कथावस्तु नाटक की आधारशिला हैं । इसीपर संपूर्ण नाटक अवस्थित रहता हैं । विवेचन की सुविधा के लिए कुछ परिभाषाओं से परिचित होना आवश्यक हैं ।

शिप्ले के अनुसार 'कथावस्तु घटनाओं का वह संगठन हैं, जिसके आधारपर नाटक की रचना होती हैं ।'[२]

वसफील्ड का मत हैं, कि 'कथावस्तु वह चारा हैं, जिसके द्वारा नाटककार गहराई में डूब कर महत्वपूर्ण विषय की बडी और दमकनी हुई मछली पकडता हैं ।'[3]

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के अनुसार 'कथावस्तु नाटक का मूलाधार हैं, जहाँ से नाटक का सारा विकास,उसकी सारी परिणति और संभावनाएँ अपने लिए ठोस भूमि पाती हैं । कथावस्तु ही नाटक में घटित समस्त घटनाओं और कार्यों की समुचित व्याख्या और अर्थबोध देती हैं । नाटक से उठे अनेकानेक प्रश्नों के उत्तर इसी कथावस्तु तत्त्व में मिलते हैं ।'[४]

---

१ रघुवंश - नाटयकला - पृ.३४ ।

२ सं.जे.टी.शिप्ले - डिक्शनरी आव वर्ल्ड लिटरेचर - पृ.३०० ।

3 ओ.ग्रीनवुड - द प्लेराइटस - पृ.९ ।

४ डॉ.लक्ष्मीनारायण लाल - रंगमंच और नाटक की भूमिका - पृ.१०९ ।

डॉ. सिध्दनाथकुमार लेखकीय उद्देश्य को अभिव्यक्त करनेवाले द्वन्द्व युक्त एवं कुतूहलपूर्वक घटनाक्रम और पात्र-संयोजन को कथावस्तु मानते हैं। `[१] इसके माध्यम से हम जीवन की हलचलों, उसके संघर्षों उसकी भावानुभूतियों एवं उसके राग-विरागों को देखते हैं।[२] संक्षेप में कथावस्तु वह आधारशिला है जिसके माध्यम से लेखक जीवन के किसी मार्मिक सत्य का साक्षात्कार कराता है।

जीवन से विच्छिन्न होकर कोई कृति उत्कृष्ट नहीं बन सकती। ` रचनाकार में अपने युग की ऐसी सहज पहचान ऐसी संवेदनशीलता आवश्यक है जो उसे गतिमान जीवन के मूल और नियामक प्रेरणास्त्रोतों से अपने परिवेश के जीवंत और विकासशील तत्वों से सम्बध्द कर। `[3] नाटक में संघर्ष या द्वन्द्व का अनिवार्य रुप से विद्यमान रहना आवश्यक है। यदि कथा का विकास पात्रों के अंतर्द्वन्द्व के माध्यम से हो तो वाहक अधिक सफल होता है। आंतरिक संघर्ष हृदय के रहस्यों को प्रकाश में लाने में सहायक होता है। वह जीवन की अमर कृति है, साहित्य की अमर ज्योति है। `[४]

कथावस्तु कई स्थितियों से होकर गुजरती है, विकसित पाती है। डॉ. उमा - शंकर सिंह के मतानुसार आधुनिक नाटकोंके विकास के मुख्यत: तीन चरण माने जा सकते हैं --- परिचय, उत्कर्ष, अपकर्ष।

उपेंद्रनाथ अश्क ने अपने समस्या नाटकों के वस्तु-विन्यास में शिल्प-चातुर्य का परिचय दिया है। उनके नाटकों की कथावस्तु के परिचय, उत्कर्ष, अपकर्ष अत्यंत प्रामाणिक रुप में विकसित होते हुए नाटकों के उद्देश्य को प्रतिफलित करते हैं।

` अंजोदीदी ` अंजो की मानसिक ग्रंथि के आधारपर नाटक की कथावस्तु मानसिक घटनाओं से सन्निहित है। नाटक का प्रत्येक पात्र अंजली के अहं की परिक्रमा करने के बावजूद कथावस्तु को मानसिक प्रक्रम की ओर प्रेरित करता पाया जाता है। `

---

१ डॉ. सिध्दनाथकुमार - हिंदी एकांकी की शिल्प-विधि का विकास-पृ. ६७।

२ - वही - ,, पृ. ६८।

3 नेमिचंद जैन - बदलते परिप्रेक्ष्य - पृ. ४३।

४ डॉ. रामकुमार वर्मा - एकांकी कला - पृ. ५३।

५ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ. ३६-३७।

अंजो की मृत्यु के बाद नाटक की कथा पूर्ववत् गतिशील रहती है । अंजो की सारी वृत्तियाँ ओमी में अवतरित होती हैं । इस प्रकार पात्र तो बदल जाते हैं, पर कथा वही रहती है । दो अंकों में विभक्त नाटक की पूरी कथा एक परिवार के दो पीढियों की कथा है । यद्यपि दोनों कथाएँ स्वतंत्र रूप में भी प्रस्तुत की जा सकती हैं । यद्यपि दोनों कथाएँ स्वतंत्र रूप में भी प्रस्तुत की जा सकती हैं किंतु अनिमा के माध्यम से अंजो और ओमी की सनक को एक में गूँधकर नाटककारने कलात्मक सिद्धि प्राप्त की है । नाटक की सभी घटनाएँ कार्यकारणशृंखला में आबध्द हैं ।

'अंजोदीदी' नाटक का केन्द्र एक अभिजात परिवार है जिसके सदस्य सभी दृष्टियों से संपन्न होते हुए भी अपनी जिंदगी नहीं बिता रहे हैं । पूरे परिवार पर अंजो के संस्कार हावी हो गये हैं, जो उसे गोद लेनेवाले नाना से विरासत में मिले हैं । अंजो का अखंड 'अहं' टस से मस नहीं होना चाहता है । उसका विश्वास है कि जीवन स्वयं एक महान घडी है । प्रात: संध्या उसकी सूईयाँ हैं ।.... मैं चाहती हूँ .... मेरा घर भी घडी की ही तरह चलें । हम सब उसके पुर्जे बन जायें और नियमपूर्वक अपना-अपना काम करते जायें । इसी विश्वास के बलपर उसने पूरे परिवार को अपने संस्कारों के अनुरूप ढाल दिया है । अंजो के पति इंद्रनारायण विवाह के पूर्व बडे हँसमुख और स्वच्छंद प्रकृति के व्यक्ति माने जाते थे, लेकिन अब अंजो के रौब में आकर उनके सारे ठहाके लुप्त हो गये हैं, उनका सलोनी रूप न जाने कहाँ चला गया है । उनके असामयिक परिवर्तन पर व्यंग्य करते हुए श्रीपत कहता है -- 'आपकी कसम! आप तो हाइकोर्ट के जज दिखायी देते हैं ... हालाँकि अभी आप एडवोकेट नहीं बने ... जब एक वकील जज नजर आने लगे तो समझिए कि वह बुड्ढा हो गया । वकील तो जवानी का प्रतीक है और जज बुढापे का'[1] अब तो उनका अपना कुछ है ही नहीं । अंजो के संकेतपर वे रेलगाडी के डिब्बे की तरह चले जा रहे हैं । वे इतने विनम्र हैं, कि अंजो के आतंक का विश्लेषण करने का प्रयास उन्होंने कभी नहीं किया, जो सामने आया, उसे स्वीकारते चले ।

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.४८ ।

अंजो के नानाजी कहा करते थे, कि ` वक्त की पाबंदी सभ्यता की पहली निशानी है । `[1] इसी आधारपर अंजो ने नियम बना लिया है कि ठीक आठ बजे सारा परिवार नाश्ता करे, दिन के एक बजे दोपहर का भोजन, तीन बजे नाश्ता और रात के नौ बजे रात का भोजन होना ही चाहिए । इसमें तनिक भी चूक होना अंजो को स्विकार नहीं है । अपने बेटे नीरज को भी उसने विचारों के अनुरुप ढाल लिया है । वह काम,आराम और खेल के समय का पूरापूरा ध्यान रखता है । समय पर पढता है, समय पर आराम करता है और समयपर खेलता है ।[2] अंजो के नाना को गंदे नौकरों से बडी चिढ थी । उनका विश्वास था कि घर के मालिकों के स्तर का पता नौकरों के पहनावे से लगता है । अंजो के नौकर इतने साफ सुथरे है, कि अनिमा ने मुन्नी को अंजो की दीदी समझा और राधे को उस घर का बुजुर्ग मानकर कुर्सी छोडकर खडी हो गयी ।

अंजो का छोटा भाई श्रीपत बिल्कुल सैलानी तबीयत का नौजवान है । पूरे नाटक में श्रीपत ही ऐसा पात्र है, जो अंजो की सनक को समझ पाता है । उसने देखा कि अंजो के सनक ने इंद्रनारायण का जीवन तो नष्ट कर ही दिया ,नीरज को भी उसी का शिकार बना रही है । नीरज क्रिकेट कप्तान बनना चाहता है, परंतु अंजो उसे डिप्टी कमिश्नर बनानेपर तुली है । वह नहीं जानती कि व्यक्ति अपने स्वभाव के अनुरुप ही विकसित होता है । माता, पिता या गुरुजन उसकी जिंदगी में परिवर्तन अवश्य ला सकते है, लेकिन यह परिवर्तन किसी निश्चित सीमातक ही लाया जा सकता है । अंजो ने इस सीमा का अतिक्रमण किया है । श्रीपत अंजो की व्यवस्था के प्रति विद्रोह कर उठता है । वह इतना विनम्र नहीं कि सबकुछ स्वीकार करता चलें । अंजो की सनक को तोडने के लिए वह एक दर्शन लेकर उपस्थित होता है । वह अति का विरोध अति से ही करता है । वह झंझा की तरह आकर अंजो के परिवार में अस्तव्यस्तता पैदा करता है । श्रीपत इंद्रनारायण और नीरज दोनों को प्रभावित करता है, उनके प्राकृतिक व्यक्तित्व को उभारने का प्रयास करता है और अंजो की मृत्यु का कारण बनता है । अपने प्रयत्न में असफल हो अंजो आत्महत्या करती है ।

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ. ३५ ।

२ - वही - ,, पृ. ३५ ।

कथावस्तु यहीं खत्म नहीं होती यह परंपरा और भी आगे बढ़ती है । अंजो तो स्वयं मर जाती है, परंतु ओमी के रूप में अपना प्रतिरूप छोड जाती है । अंजो के आदर्श का पालन, वह अपना परमधर्म मानती है । ओमी को इस बात का दुःख है कि उसका पति अंजो की इच्छाओं के अनुरूप न हो सका, लेकिन उसे विश्वास है कि वह अपने बेटे नीलम को अपनी इच्छाओं के अनुरूप ढाल लेगी । नीलम कवि बनना चाहता है, ओमी उसे कमिश्नर बनाना चाहती है । नीरज जानता है कि ओमी यदि नीलम पर उसी तरह छायी रही जैसे अंजो उस पर छायी हुई थी,तो वह किसी प्रांत या केंद्रीय सरकार के किसी कार्यालय में फाइलों के साथ माथा फोडेगा ।"[1] अंजो के कठोर अनुशासन में रहकर भी नीरज ओमी के शब्दों में लोफर ' ही रह गया । तो क्या विश्वास किया जाय कि नीलम ओमी की इच्छाओं के अनुरूप ढल जायेगा । नीरज अपने अनुभव का उल्लेख करता हुआ ओमी से कहता है ' मैं तो बना ही था क्रिकेट का कप्तान होने के लिए । ... पर ममी पीछे पडी थी मुझे आई.सी.एस. बनाने के । ... न क्रिकेट कप्तान बने, न आई.सी.एस. '[2] नीरज जानता है कि बडों को अपना विचार बच्चों पर नहीं लादना चाहिए । इसलिए वह अपनी माँ के कठोर अनुशासन की आलोचना करता है और ओमी को भी वैसा अनुशासन न रखने का परामर्श देता है, परंतु उसे क्या पता, कि वह स्वयं उसी ग्रंथि का शिकार है । यहाँ नाटककार ने मनोवैज्ञानिक सत्य का उद्घाटन किया है -- वह है मानव की अतृप्त आकांक्षा । जब व्यक्ति अपनी किसी आकांक्षा को अपने जीवन में फलीभूत नही कर पाता,तो वह उसे वह अपनी संतति द्वारा पूर्ण करना चाहता है । अंजो की चाहत का शिकार नीरज क्रिकेट कप्तान बनने की अपनी अतृप्त आकांक्षाओं की पूर्ति नीलम द्वारा करना चाहता है । इस प्रकार अनजाने वह नीलम को उसी ग्रंथि से ग्रसित कर रहा है, जिसका शिकार वह स्वयं हो चुका है ।

बीस वर्षों के बाद श्रीपत पुन: नीरज के घर आता है । उसने देखा कि अंजो जो कुछ जिंदगी में न कर सकी, वह उसने मरने के बाद कर दिखाया ।'[3] जबतक अंजो

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.१०२

२ - वही - ,, पृ.९९-१०० ।

3 - वही - ,, पृ.१३७ ।

जीवित थी, इंद्रनारायण कचहरी में चोरी-चोरी शराब पीते रहे, किंतु अंजो की मृत्यु के बाद उन्होंने शपथ ले ली कि वे अब कभी नहीं पियेंगे। दूसरी ओर ओमी को कायदे कानून के प्रति अंजो से भी अधिक सतर्क देखकर वह दंग रह जाता है और निश्चय करता है कि अंजो का बाद टूटना ही चाहिए। ओमी को अंजो की परंपरा में देखकर वह बरबस मेजपर सो जाता है और प्रतिकार करने पर कहता है 'कसम ले लो जो पिछले बीस बरसों में कभी मेजपर सोया हूँ ... लेकिन यहाँ आकर मालूम हुआ, कि अंजोदीदी अपना प्रतिनिधि छोड गयी है जो कुछ बातों में अंजो के भी कान काटती है। न जाने क्या हुआ कि मैं फिर वैसे का वैसा हो गया।'[१]

श्रीपत को ओमी की इस प्रवृत्ति से सख्त नफरत है। बीस वर्ष पहले जैसे उसने नीरज के हृदय में अपने ममी के प्रति विद्रोह जगाया था, उसीप्रकार नीलम को भी अपनी माँ ओमी के प्रभाव से हटकर प्राकृतिक जीवन जीने की प्रेरणा देता है। अनिमा द्वारा श्रीपत को पता चलता है कि अंजो कीमृत्यु दौरे से नहीं हुई, उसने विष खाकर आत्महत्या की थी। अंजो ने विष क्यों खाया, इसका रहस्योद्घाटन करते हुए श्रीपत कहता है -- 'अंजो सख्त मार्बिड और जालिम थी क्योंकि उसके नाना मार्बिड और जालिम थे। वह इस घर को घडी की तरह चलाना चाहती थी, पर वह न जानती थी कि घडी मशीन है और इन्सान मशीन नहीं। जब इन्सान मशीन बन जायेगा तो वह दिन दुनिया के लिए सबसे बडे खतरे का होगा। इन्सान का मशीन बनना सनक ही का दूसरा रुप है, अंजो यदि इसे समझाती तो जीजाजी को चोरी से शराब पीने और अंजो को मरने की जरुरत न पडती।'[२]

अंजो के तिलस्म को तोडना आवश्यक मानता है, ताकि उसके परिवार के लोग स्वाभाविक जीवन जी सके। नीरज सिटी मॅजिस्ट्रेट होता हुआ भी क्रिकेट खेले। नीलम आई.सी.एस. या क्रिकेट का कप्तान बने या न बने, पर अवश्य कवि बने और इंद्रनारायण इक आध पेग पियें तथा एक आध शाम 'स्टॅण्डर्ड' या 'गेलार्ड' में व्यतीत करें। श्रीपत अपने प्रयत्न में सफल हुआ, इसका प्रमाण इंद्रनारायण का

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ. १२८-२९।

२ - वही - ,, पृ. १३९।

यह कथन है जो अंजो की तस्वीर के सामने खडे होकर शिकायत भरे स्वर में कहता है ` जरा-सी गलती पर अपनी सनक में तुमने मेरे पाँच बरस रेगिस्तान बना डाले अंजो, मैं तुम्हें क्या कहूँ । इस कमरेपर बरसों से तुम्हारा जादू भारी है, लेकिन श्रीपत ठीक कहता है ` यह जादू टूटना ही चाहिए, इस घर को घडी की तरह नहीं, इन्सानों की तरह जीना चाहिए । `[१]

नाटककार का उद्देश्य अति का विरोध कर संतुलित जीवन का मार्ग प्रशस्त करना है । समस्या का समाधान श्रीपत द्वारा किया गया है, परंतु यह उचित नहीं है, इसे नाटककार का आदर्श मानना गलत होगा । श्रीपत भी उतना ही असम है, जितना अंजो थी । सफाई और नियम बध्दता बुरी वस्तुएँ नहीं हैं, परंतु अंजो ने उन्हें अति की सीमापर पहुँचा दिया था, इसलिए वह बुरी लगने लगी । नाटक का उद्देश्य स्पष्ट नहीं है ।

इसमें दूसरी एक सामाजिक समस्या है । देश में कांग्रेस के शासनारुढ होने के बाद सरकारी अधिकारियों के समक्ष यह प्रश्न खडा हुआ कि वे योग्यता और सच्चाई को महत्त्व दें या गांधी टोपियों को जिन्हें पहचाननेवाले सोचते हैं कि उन्हें देखते ही कलेक्टर को भी शिष्टाचार से खडा हो जाना चाहिए, लोग कोई-न-कोई माध्यम ढूँढ लेते हैं । स्वतंत्रता के बाद शासन व्यवस्था बिगड गयी है । अयोग्य व्यक्ति बडे पदोंपर पहुँच गये हैं । इसी कारण अयोग्य प्रशासनिक अधिकारियों के कारण नित नयी समस्याएँ उत्पन्न होती जा रही हैं ।

समीक्षा - अंजोदीदी ` की कथावस्तु अंजो की मानसिक ग्रंथी के आधारपर मानसिक घटनाओं से सन्निहित है । नाटक का प्रत्येक पात्र अंजली के अहं की परिक्रमा करने के बावजूद कथावस्तु को मानसिक प्रक्रम की ओर प्रेरित करता पाया जाता है ।[२] अंजो की मृत्यु के बाद भी नाटक की कथा पूर्ववत गतिशील रहती है । अश्क जी ने कथावस्तु में शिल्प चातुर्य का परिचय दिया है । वसफील्ड का मत है --` कथावस्तु वह कहानी है जो नाटककार के उद्देश्य के अनुरुप क्रमबध्दता एवं विस्तार ग्रहण करती है ।

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.१४० ।

२ डॉ.गणेशदत्त गौड - आधुनिक नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन - पृ.२११ ।

यहीं सार्थकता है `अंजोदीदी` की कथावस्तु में। यह कथावस्तु नाटककार के उद्देश्य के अनुरूप अपनी चारों स्थितियों को क्रमबध्दता के साथ साथ विस्तार देती अंत चरमोत्कर्ष पर पहुँच जाती है।

अश्क जी का कथानक चयन कहीं अधिक पूर्ण और कलात्मक सिध्द है। इनके कथानकों की विशेषता है, इनकी अमांसलता जो उनके इस नाटक में स्पष्ट हुई है। इसमें कहीं पर भी मॉसलता नहीं है। साथ ही इसकी और एक विशेषता इसमें दिखायी देती है कि उन्होंने कथानक के विस्तार के साथ काल की गति की शर्त को अस्वीकार किया है। अंजो की मृत्यु के बीस बरस बाद नाटकीय कथावस्तु वहीं गतिशीलता पकडी हुई है, इसमें न कोई अवरोध है, न व्यवधान। यह उनके वस्तु - विन्यास चातुर्य का ही कमाल है। उन्होंने इस कथावस्तु में संक्षेपण कला को सम्य श्रेणीपर चढने नहीं दिया है। भावुकता की सच्चे अर्थ में कमी और व्यंग्य के समुचित संयोजन एवं व्यक्ति तथा समाज के संघर्ष की भाषा को समझा लेने के कारण कथानक में गजब की सादगी और प्रभविष्णुता आयी है।

अंजो की मृत्यु के बाद भी नाटक की कथा पूर्ववत् गतिशील रहती है। अंजो की सारी वृत्तियाँ ओमी में अवतरित हो जाती हैं। इस प्रकार पात्र तो बदल जाते हैं, पर कथा वहीं रहती है। दो अंको में विभक्त नाटक की पूरी कथा एक परिवार के दो पीढियों की कथा है। यद्यपि दोनों कथाएँ स्वतंत्र रूप में भी प्रस्तुत की जा सकती हैं किंतु अनिमा के माध्यम से अंजो और ओमी की कथा को एक गुंथकर नाटककार ने कलात्मक सिध्दि प्राप्त की है। नाटक की सभी घटनाएँ कार्यकारण शृंखला में आबध्द हैं।

कथावस्तु का प्रारंभ, मध्य और अंत चरित्रों के स्वाभाविक कार्यव्यापार में क्रमिक रूप से विकसित होता हुआ नाटक के उद्देश्य को अंत में प्रतिफलित करता है। अश्क के प्राय: सभी नाटकों में वस्तु विन्यास का यही विकास क्रम है। नाटक धीरे धीरे प्रारंभ की अवस्था से विकसित होकर मध्यावस्थातक पहुँचते पहुँचते फलागमतक आ जाता है। और फिर दूसरे दृश्य में भी उसी अवस्था से विकसित होकर उसी अंततक पहुँचता है।

मनोवैज्ञानिक स्तरपर भी यह विचारों के दमन और तज्जनित प्रतिक्रिया के संघर्ष की कहानी है। पूरी कथावस्तु अंजो के इर्दगिर्द घूमती है। कथावस्तु के सारे सूत्र उसके कार्य से बंधे है। नाटक के आदि से अंततक 'अंजो' नाटक की आधारशिला है।

अंजोदीदी की कथा का एक सुनिश्चित प्रारंभ और विकास है जो आरोह अवरोहों से गुजरकर चरमसीमा और नाटकीय परिसमाप्ति की ओर बढता है। सच बात यह है कि नाटक की कथा का सम्बन्ध वस्तुजगत से उतना नहीं है जितना कि मानसिक जगत से। इसी कारण घटनाओं की सघनता और बाह्य परिस्थितियों का संघर्ष अधिक नहीं है किंतु मनोवैज्ञानिक धरातलपर होने वाले जिस घात प्रतिघात पर यह कथावस्तु टिकी है, उसमें भी एक निश्चित क्रम परंपरा और स्वाभाविक विस्तार है। 'अंजोदीदी' एक सफल नाट्य है, कथानक के जो तत्व है, उसके अनुसार कथावस्तु रोचक, नाटकीय, प्रभावशाली है। इसप्रकार कथा विन्यास की दृष्टि से यह नाटक पूर्णत: सफल सिध्द हुआ है।

अहंकारात्मक मनोवैज्ञानिक वर्ग में अंजोदीदी का पात्र आता है। 'अंजोदीदी मनोविकारों के घात-प्रतिघात और उसकी प्रतिक्रिया की कहानी है। कोई दैवी घटना कहीं नहीं है, आकस्मिक रूप से बदलनेवाली परिस्थितियाँ कहीं नहीं है, जो जीवन को अंधेरे या उजेले मोड पर डाल देती है। उसकी कथा की प्रेरक शक्ति है - मनोविज्ञान।'[१]

मनोविज्ञान के सहारे अश्क जी ने इसमें अभिजातवर्गीय पारिवारिक प्रतिशोध, काम-विकृति, सेक्स की प्रकृतेच्छा का विरोध या स्वच्छंद प्रणय आदि कुंठाओं को मान्यता नहीं दी, प्रत्युत इसमें आनुवंशिक पूर्व प्रवृत्तिगत चारित्रिक मनोवृत्तियाँ, ग्रंथियों और विलक्षणताओं का मनोवैज्ञानिक पहलू प्रदर्शित किया है।

अंजली के मन में जीवन को नियंत्रित एवं अनुशासित करनेवाली मनोवृति संस्कारगत है। यह प्रकृति उसे गोद लेने वाले नानाजी से विरासत में मिली है।

---

१ डॉ. गणेशदत्त गौड - आधुनिक हिंदी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन -

जिस प्रकार अंजली ने स्वयं इस प्रवृति को फ्राइडियन आनुवंशिक पूर्व प्रकृति (हेरेडिटरी प्रेडिस्पोजिशन) के सिध्दान्तानुसार प्राप्त किया है । उसी प्रकार ओमी ने भी इसे पाया है । अर्थात अंजली ने इस प्रवृति को अपने नानाजी से और ओमी ने अंजली से प्राप्त किया है । इस परंपरागत एक पीढी से दूसरी पीढी में पायी जानेवाली प्रवृति को अमेरिका के प्रसिध्द मनोवैज्ञानिक गोडार्ड महाशय के संस्कारगत अनुशीलन से निकले हुए परिणामों से भी मान्यता प्राप्त होती है । गोडार्ड का ज्यूक वंश का अध्ययन तीन सहस्त्र व्यक्तियों में एक ही प्रवृति को समान बन जाता है । अत: अश्क के इस नाटक में तीन पीढी तक एक ही प्रवृति का शाश्वत अधिपत्य असंगत नहीं है ।

इस नाटक में अश्क ने रचनात्मक प्रक्रिया के अंतर्गत मनोविश्लेषणात्मक प्रवृति को अपनाया है । यह सुस्पष्ट है कि अंजो की मानसिक अवस्थिति ने सब पात्रों को पूर्ण मनोवैज्ञानिक बना डाला है । अंजो की मनोग्रस्तता पात्रों के अतिरिक्त नाटक की कथावस्तु को भी मनोवैज्ञानिक बनाने में सफल हुई है । नाटक की रचनात्मक प्रक्रिया को भी पात्र और कथावस्तु के अनुसार नाटककार ने मनोविश्लेषण पध्दतिपर रखा है । मानसिक अंतर्द्वन्द से भरे इस नाटक में श्रीपत मनोविज्ञान का कार्य करता है । वह किसी प्रकार की कुंठा के वशीभूत नहीं बल्कि ग्रंथियों से आक्रान्त व्यक्ति की उसे पहचान है । उसकी यह विशेषता एक मुखी है, क्योंकि स्नायु-व्यतिक्रम का उसे निदान भी ज्ञान है, उपचार उससे नहीं आता । यदि अपनी सगी बहिन अंजली की मनोग्रंथि को वह मनोविश्लेषणात्मक ढंग से खोलने में समर्थ होता तो वह बेचारी आत्महत्या क्यों करती ? वह उसे मनोग्रस्तता के कारण अस्वस्थ चित्र उद्भ्रान्त (मार्बिड) बन जाता है । उसके मरने का कारण उसकी उद्भ्रान्तता ही थी ।[१]

निष्कर्ष --

'अंजोदीदी' की कथावस्तु अहंकारात्मक मनोवैज्ञानिक कोटि में आती है । यह कथा-वस्तु अंजो की मानसिक ग्रंथी के आधारपर मानसिक घटनाओं से सन्निहित है । इस नाटक में कहीं भी मांसलता नहीं है । नाटक नायिका प्रधान होने के कारण अंजोदीदी ही इसकी मेरुदण्ड है और कथा के सारे सूत्र उसके व्यक्तित्व से गूंथे हुए हैं । अंजो के प्रचंड अहं की तुष्टि में कोई शाश्वत कठिनाई है, जो अवरोध बनकर खडी है और उसके अहं को निरर्थक और प्रभावहीन करती जा रही है । इसके पीछे मनोविज्ञान के रुप निरोधन (Repression) स्थानान्तरण (Displacement), स्वाक्रमण (Turning it against himself) कार्य करते हैं । आजकल मनोवैज्ञानिक सत्य को प्रकट करनेवाला साहित्य उपादेय है । इसकी कथावस्तु बीस साल के अंतराल व्यवस्थित रुप से जोडता भा है । कथावस्तु नाटककार के उद्देश्य के अनुरुप क्रमबध्दता एवं विस्तारग्रहण करती है और यही सार्थकता है 'अंजोदीदी' की कथा-वस्तु में । कथावस्तु एक सुनिश्चित प्रारंभ और विकास है जो आरोह, अवरोहों से गुजरकर चरमसीमा और नाटकीय परिसमाप्ति की ओर बढता है । कथा-विन्यास की दृष्टि से यह नाटक पूर्णत: सफल हुआ है ।

१ डॉ. गणेशदत्त गौड - आधुनिक हिंदी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन ।

पात्र या चरित्र चित्रण --

साहित्य चाहे जिस तरह का हो, जिस कोटि का हो, उसका उद्देश्य मानव है। मानव जीवन के विविध रुपों का प्रस्तुतीकरण ही साहित्य है। नाटक में सजीवता और स्वाभाविकता लाने के एकमात्र माध्यम उसके चरित्र हैं। पात्र - नाटक का वह मूल तत्व है जिसके क्रियाकलापों से नाटक का क्रिया-व्यापार गतिशील होता है। नाटककार की सफलता ऐसे पात्रों के निर्माण में है जो दर्शक के मानस पटलपर शाश्वत प्रभाव डाल सके। चरित्रचित्रण कथानक निर्माण से उच्चतर कार्य है। कथानक निर्माण को हम आविष्कार कहते हैं, पर चरित्र निर्माण को सृष्टि कहकर गौरवान्वित करते हैं। कथानक चरित्र का निर्माण नहीं कर सकता लेकिन चरित्र कथानक का निर्माण कर सकते हैं और कहते हैं --

चरित्र अलग अलग प्रकार के होते हैं। मगर आधुनिक काल के समाज में चरित्र `चरित्र` होता है। उसकी एक अपनी अलग शख्सीयत होती है।

अंतर्द्वन्द्व और कार्य व्यापार, रुढ़ियाँ और अंर्तविरोध, वर्गीय रुप और जातीय संस्कार, सामाजिक चेतना और वैयक्तिक अहंभाव, नीति, अनीति का संघर्ष और परिस्थितिजन्य अवसरवादिता, प्रकृत जीवन और उसमें सामाजिक यथार्थ का अन्वेषण ये सब अनेक रुप रुपाय व्यक्तित्वों के विविध रासायनिक द्रव्य हैं, जिनके संतुलित मिश्रण और कलात्मक प्रतिफलन से साहित्य के सजीव व्यक्तित्व की सृष्टि होती है।` [१]

चरित्रांकन की सफलता नाटककार के विविध जीवनानुभवपर आधारित है। `अंजोदीदी` की चरित्रांकन सफलता में कोई संदेह ही नहीं है। समूचे नाटक में अंजो और श्रीपत दो ही जीवंत और शक्तिशाली पात्र हैं और इन्हीं की विचार-धाराओं के संघर्षपर कथावस्तु का ढाँचा टिका हुआ है।` [२]

अन्य सभी पात्र - नीरज, अनिमा, ओमी, नीलम, मुन्नी, राधू ये सभी औसत स्तर के पात्र हैं। हाँ। वकील इंद्रनारायण और अन्नो को छोडकर इनका कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं है। सच बात तो यह है, कि अंजो का आतंक श्रीपत को

---

१ गोपालकृष्ण कौल - नाटककार अश्क - १९५४ - पृ. ७७-७८।

२ सतीशचंद्र श्रीवास्तव-अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ. २४।

छोडकर बाकी सभी पात्रों पर हावी हैं । वस्तुत: अंजोदीदी नायिका[illegible] हैं । नाटक की पूरी धुरा अंजोदीदी के अनुशासनप्रियता, कडाई और आतंक पर आखिर तक छायी है । इसलिए हम पहले `अंजोदीदी` का चरित्रचित्रण करते हैं । उसके बाद श्रीपत, इंद्रनारायण, अनिमा, नीरज, ओमी, नीलम आदि ओंसत चरित्रों का ।

`अंजोदीदी`

नाटक में प्रथम दर्शनी उसका व्यक्तित्व नाटककारने इस तरह दिया है - पतले - छरहरे शरीर की दुर्बल नसोंवाली युवती, जो न केवल गृहस्थी की चक्की में जुटी हुई है, वरन् पूरी निष्ठा और गंभीरता से जुटी हुई है । सुंदर मुखपर अभी से हल्की-सी लकीरें बन गयी हैं और मुस्कान के होते हुए भी, उसके माथे की नसें हमेशा तनी रहती हैं ।नाटककार ने कुछ हल्के से ही अंजो के शारीरिक व्यक्तित्व प्रकट किया है, क्योंकि इसमें अंजो के अंतर्गत पालित दुर्बल भावनाओंका जो सनक की सीमातक जाता है, प्रकट करना, नाटककार का अभीष्ट है । परंतु पहरावे की सुरुचि, स्वच्छता, निर्दोषता, व्यक्तित्व की स्फूर्ति, सजगता और जागरुकता से उसका आंतरिक व्यक्तित्व ही प्रभावशाली है ।`[१]

अंजो उस अशरीरी दमन की मूर्त प्रतीक है, जो उसे अपने स्वर्गीय नाना से विरासत में मिला है । अंजली को अपने नाना से विरासत में जो स्वभाव मिला है, उसका स्वाभाविक गुण है - दूसरों पर छा जाना । अंजो अपने सारे घर को अपनी मर्जी के अनुसार चलाया करती है । उसका रोब कुछ ऐसा है कि उसके घर में हवा भी सहमी-सहमी सी होती है । अपने विचारों को दूसरों पर थोपने की मनोवृति उसे जन्मजात तो नहीं मिली होगी, परंतु यह सच है कि जिस वातावरण में वह पली-बढी उसमें दमन और आतंक से अछूती रह जाना उसके लिए असंभव था । पहले वह स्वयं अपने नाना के आतंक का शिकार थी, किंतु धीरे धीरे उसके अवचेतन में यह मनोवृति इतनी गहराई में जाकर धँस गयी कि वह आरोपित वृति न रहकर उसके व्यक्तित्व का एक अभिन्न अंग बन गयी । उसकी सारी मान्यताएँ वस्तुत: उसके नाना की मान्यताएँ हैं --

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पहला अंक - पृ.५२-५३ ।

'वक्त की पाबंदी सभ्यता की पहली निशानी है ।' इसके अनुसार अंजो ने नियम बना लिया है, कि ठीक आठ बजे सारे परिवार को नाश्ता कर लेना है । प्रथम अंक के प्रथम दृश्य का पर्दा उठते ही उसके दमन,आतंक और समयनिष्ठता की भावना का आभास मिलता है । जैसे ही घड़ी आठ बजाती है, उसका स्वर सुनायी देता है "मुन्नी, नाश्ता रखो मेजपर (तनिक कड़े स्वर में) तुम कर क्या रही हो ? आठ बजने को आये हैं और नाश्ते का कहीं पता नहीं ... नीरज बेटे, कपड़े बदल लिये तुमने ... और अपने पापा से कहो, नहाकर सीधे इधर आयें । नाश्ता कर लें, फिर चाहे जो करते रहे ।"[1] ये संवाद अंजो के गतिशील दमनचक्र को स्पष्ट करते हैं और इस दमनचक्र से उसका पति , पुत्र ,नौकर भी आतंकित हैं ।

अंजो में संतुलित जीवनदृष्टि का अभाव है, इसलिए वह किसी भी अच्छाई को समयबध्दता का सनक की हदतक खींच ले जाती है । अब कायदे और सफाई आदि अपने में बुरे नहीं हैं, सच बात तो यह है कि उनका संतुलित उपयोग प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में नितांत आवश्यक है, किंतु अंजो के व्यक्तित्व में ये सामान्य आदतें सनक की सीमा छूने लगती हैं । उसमें इतनी ज्यादा औपचारिकता आ जाती है, कि हृदय की सहज वृत्तियाँ घुटकर दम तोड़ने लगती हैं । स्नेह का तरल स्रोत सूख जाता है । जब धूल और पसीने से लथपथ श्रीपत स्नेह के कारण उसके पति से लिपट जाता है, तो अंजो डाँटकर कहती है --

"श्रीपत ,क्या कर रहे हो ? धूल और पसीने से तुम्हारे कपड़े गच हो रहे हैं और तुम लिपटे जा रहे हो इनसे । चलो नहाओ । कपड़े बदलो । सामान कहाँ है तुम्हारा ?"[2] अंजो की नजर में स्नेह - ममता पीछे है, पहले है सफाई । मिलन की व्याकुलता में इन्सान कुछ नहीं देखता, जिसको मिलना था - मिलने समय अपनी तरफ से पूर्णत: बेखबर अपने आप्तजनों को प्यार देता है -- प्यार पाता है । अंजो के इस रूखे व्यवहारपर उसके प्रति हमारे मन में झुंझलाहट पैदा होती है ।

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.५२ ।

२ -वही- , , पृ.६३ ।

अंजो के कठोर दमन के सबसे ज्यादा शिकार हैं - वकीलसाहब और नीरज - सच में अंजो के कठोर दमन की यह मूर्त ट्रेजेडी हैं । वकीलसाहब की अलहड और मौजी जिंदगी ने अंजो के नियंत्रण और अनुशासन से समझौता तो कर लिया हैं, किंतु इस आत्म-निग्रह के पीछे उनके हृदय की किसी स्वाभाविक वृति का योग नहीं हैं । इसी कारण जैसे ही उन्हे थोडा अवसर मिलता हैं, उनकी मुलभूत सैलानी मनोवृति सिर उठाने लगती हैं । परंतु वकीलसाहब में इतनी शक्ति नहीं हैं कि अंजो के जादू को तोड फेंके, जिसके फलस्वरुप उनकी जिंदगी रेगिस्तान की तरह नीरस और सुनसान बन जाती हैं । वास्तव में उनके व्यक्तित्व की यह सबसे बडी ट्रेजेडी हैं । वास्तव म अजा का आतंक घर के हरेक सदस्य के नैसर्गिक रुझान को विकसित होने नहीं देता हैं, बल्कि दमित करता हैं ।

अंजो का जुल्म पूरी कडाई और तनाव के साथ नीरजपर हावी हैं । चूँकि स्वर्गीय नानाजी वक्त की पाबंदी, सफाई और हद दर्जे की शिष्टता के कायल थे और सबसे बडी बात तो यह हैं, कि वे आई.सी.एस.अफसर थे, इसीलिए वह अपने बेटे को भी उसकी इच्छा के विरुध्द गढ-पीटकर इस तरह बना लेना चाहती हैं कि उसमें उसे अपने आदर्श नानाजी की प्रतिमूर्ति के दर्शन हो सके । इसीलिए नीरज की नैसर्गिक अभिरुचि और सहजात वृत्तियों को प्रतिकूल दिशाओं में जबर्दस्ती मोडा गया और उसका भीषण परिणाम यह निकला कि वह क्रिकेट का कप्तान बन सका और न कलक्टर । न जाने और कितने नीरज हमें आस-पास की दुनिया में मिल जायेंगे । अंजो द्वारा विचारों और मान्यताओं को लादने का अत्याचार कितना बडा था - इसे आगे चलकर स्वयं नीरज भी महसूस करता हैं ---

" .... मैं तो बना ही था क्रिकेट का कप्तान होने के लिए । मामाजी ने कहा था, 'बेटे दो घंटे पढ़ो और छै घंटे डटके खेलो, निश्चय ही तुम क्रिकेट के कप्तान बनोगे । पर ममी पीछे पडी थी मुझे आई.सी.एस. बनाने [illegible] खेलना पडा । मन क्रिकेट में और आँखें पढाई में । फल तुम्हारे सामने हैं । न क्रिकेट के कप्तान न बनें न आई.सी.एस. ।' [१]

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - श्री सतीशचंद्र श्रीवास्तव - पृ.१२६ ।

अंजो के व्यक्तित्व में बध्दमूल दमन और सनक की मनोवृत्ति का अंतरंग सम्बन्ध उसके उद्दाम अहं से है, वह टूट तो सकती है, लेकिन न झुक सकती है और न हार मान सकती है। पतले, छरहरे शरीर की दुर्बल नसोंवाली इस नारी का हठीला दर्प उसके माथे की दुर्बल नसों से ही द्योतित रहता है। उसे इस बात का गर्व है कि उसने अपने संसर्ग में आनेवाले लगभग सभी पात्रों को मनोनुकूल सांचे में ही ढाल लिया है और अन्नो से वह अपने पति के सम्बन्ध में कहती भी है - `बड़े सिरपटये थे पहले-पहल पर मैं ले ही आयी अपने ढब पर.... ।`[१]

अपने इस अहं की रक्षा के लिए वह सबकुछ कर सकती है - भूख हड़ताल कर सकती है, रूठकर पीहर जा सकती है और यही नहीं, अपनी जिंदगी का बलिदान भी दे सकती है। किया भी उसने यही। वकीलसाहब की शराब पीने की लत उसके अहं को सबसे बडी चुन्नौती थी। इस चुन्नौती से वह लोहा लेती है, लेकिन जब उसे अपनी हार का आभास मिल जाता है तो वह अपने आत्म-विनाश के द्वारा उस उद्देश्य को पूरा करना चाहती है जिसे जीवित रहकर वह न कर सकी - वह मरकर भी जीवित रहती है और उसका दमन चक्र निर्विरोध चलता ही रहता है। नीरज ओमी से कहता है ---

`... और मैं कहता हूँ कि ममी स्वयं ब्रेक थी। जबतक वे जिंदा रही उन्होंने इस घर की जिंदगीपर ब्रेक लगा रखी उसे स्वतंत्रता से बढने फलने फूलने नही दिया और जब मर गयी तो ब्रेक लगाती गयी।`[२]

अंजो अपने अहं की तुष्टि के लिए नीरज का विवाह खोजकर ओमी जैसी एक ऐसी लड़की से करती है, जो अपनी ही अनुकृति और प्रतिच्छाया है उसे विश्वास था कि ओमी उसके अहं की थाती को सहेज सकेगी। किंतु उसे यह भी आशंका थी, संभव है, कि उसकी आत्महत्या की प्रतिक्रिया का असर उसकी इच्छा के अनुकूल हो, इसीलिए वह अन्नो को ही उसकी सूचना देती है ---

---

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.५७ ।

२ - वही - पृ.१२९ ।

GARH. ... LIBRARY ... KAPUR

".... घोषणा कर देना, कि फिर में अंजो की जान निकल गयी और अपने जीजाजी को शर्म दिलाना कि आप की मद्यपान का क्या दुष्परिणाम निकला.."[१]

वास्तव में उसकी इस आत्म-घाती मनोवृति का गहरा सम्बन्ध उसकी अस्वस्थ मनोवृति से है। जब श्रीपत को पता चलता है कि उसने जहर खाकर जान दे दी है, वह वेदनामिश्रित झुंझलाहट भर कहता है --

".... फिर उसको आप की मद्यपता पर न आता, तो किसी बातपर आता। वह कमजोर नसों की मॉर्बिड औरत थी।...."[२]

किंतु अंजो की सनक और उसके मानसिक गठन के असंतुलन के पीछे निष्ठा और गंभीरता की इतनी सुदृढ पीठिका है, कि उसका मजाक नहीं उडाया जा सकता। कुछ भी हो, उसमें इच्छा शक्ति की दृढता और प्रबलता है और उसका जीवन इस तथ्य का भी परिचायक है कि दृढ-इच्छा-शक्ति ही जीवन का नियामक तत्व है।... सारा-का-सारा नाटक उसकी और उसकी मान्यताओं की ट्रैजेडी से उत्पन्न अव्यक्त करुणा में समाया हुआ है।

अंजली ही इस नाटक की मेरुदण्ड है और कथा के सारे सूत्र उसके व्यक्तित्व से गूँथे हुए हैं। जीवन के व्यवस्थित, नियंत्रित, अनुशासित बनाए रखने की प्रवृति उसके व्यक्तित्व में बध्दमूल है। उसे विश्वास है, कि जिंदगी भी एक मशीन के समान है, जिसका परिचालन घडी की सुइयों के इशारेपर किया जाना असंभव नहीं है। निश्चय ही उसकी सारी मान्यताएँ, समस्त विश्वास और विधि-निषेध उसे अपने आई.सी.एस. नाना से विरासत में मिले हैं, जिनके व्यक्तित्व के रेशे-रेशे में दूसरोंपर शासन करने और अपने विचारों को लादने की प्रवृति व्याप्त थी।

अंजो की तानाशाही और आतंक उसके संसर्ग में आनेवाले समस्त पात्रोंपर हावी है। वकीलसाहब, नीरज को अपनी रोजमर्रा की निर्धारित जीवन-व्यवस्था से जरा-भी इधर-उधर बहकने की छूट नहीं है। यही नहीं, वक्त की पाबंदी, सफाई, करीने-सलीके और विधि-निषेध उसके नौकरोंपर भी पूरी कडाई के साथ लागू है।

---

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.१४८।

२ - वही - ,, ,, पृ.१६७।

नौकरों के दैनिक जीवन का ढर्रा भी अंजो के संकेत पर चलता है । उसमें आसानी से कोई रद्दोबदल होना असंभव है । श्रीपत जैसा अल्हड और सैलानी तबीयत का जीव तो मुन्नी से यह सुनकर चौंक पडता है -- `आप खाना खा लीजिए,हम लोगों के आराम का समय है ।`[१] अंजो के भीतर की तानाशाह नारी अपने अहं की प्रबल समर्थक है । उसे दृढ विश्वास है कि वह बंजर धरतीपर भी अनचाहे बीज उगाने में समर्थ है । यह मिथ्या धारणा वस्तुत: उसकी प्रबल अहंवादी मनोवृत्ति की सूचक है ।

अंजली का मनोविज्ञान ऐसे स्तरपर संगठित हुआ है कि उसकी यह सनक ऊपरी या थोथी नहीं दिखायी देती । इस सनक को पालित करनेवाली शक्ति है - उसका अखंड अहं । अहंवादिता के आतंक के बावजूद कोई ऐसी रहस्यमयी घुटन है जो उसे चैन नहीं लेने देती, हर व्यवस्था को देखकर भी वह तिलमिलायी झुंझलायी सी घूमती रहती है । उसके उस प्रचंड अहं की तुष्टि में कोई शाश्वत कठिनाई है ,जो अवरोध बनकर खडी है और उसके अहं को निरर्थक और प्रभावहीन करती जा रही है । इस घर को स्वीकार न कर पाने के कारण वह घुटती घुटती उस सीमातक जा पहुँचती है,जहाँ से नाश की स्टेज` स्वाक्रमण-प्रेरणावेग` मनोवृत्ति से अविच्छिन्न सम्बन्ध रखती है । नवीन मनोविज्ञान प्रणेताओंने इस मनोवृत्ति को [illegible] Desteruri[illegible] -- आदि नामों से पुकारा है । घृणा के बावजूद ऐसा मनोग्रस्त व्यक्ति अपने हृदय में आक्रमणात्मक भाव जाग्रत कर बैठता है । यह अवस्थिति तीन मानसिक प्रक्रमों को उत्पन्न करती है -- निरोधन (Repression) स्थानान्तरण (Displacement) स्वाक्रमण Turning it against himself) आत्महत्या स्वाक्रमण प्रेरणावेग का अन्यतम रूप है । यह प्रवृति अज्ञान में कार्य करती है । जे.सी.फलगुसेन की यह उपपत्ति अंजली पर अक्षरश: सत्य है, क्योंकि वह हठी अभिमानिनी नारी,अपने स्वयं के नाश से भी उसी कार्य को फलित करना चाहती है, जिसको वह जीवनपर्यन्त भी जिंदा रहकर न कर सकी । उसके अहं को सबसे बडी चुनौती है इंद्रनारायण कौल द्वारा शराब पीने की आदत को न छोड पाना ।

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - सतीशचंद्र श्रीवास्तव -पृ.९०।

जब अंजो अपने प्रियतम की इस निकृष्ट आदत से पराभूत हो जाती है, तब उसका अहं अंतर्द्वन्द्व की चरमसीमा का उल्लंघन कर जाता और स्वयं आत्म-भर्त्सना से अपना अस्तित्व सर्वदा के लिए खो बैठती है। लेकिन उसके इस विनाश में भी वह शालीनता और संयम है कि जो नष्ट होते हुए भी अपनी पराजय स्वीकार नहीं कर सकता।

अपने पराजित जीवन की विफलता को लिए हुए, एक दिन अंजो अपनी रहस्यमय मृत्यु का आभास केवल अन्नो को देकर मर जाती है। लेकिन वह मरकर भी जीवित रहती है। उसका पूरा परिवार उसके पीछे भी पूर्णत: आतंकित रहता है। उसका अहं सिर नहीं झुकाता। अपनी जिस अर्धविक्षिप्तावस्था में वह अपने अहं को सहेजती है, मानवों को मशीन बना देना चाहती है। उसका चक्र चलता रहता है और वह उन्हें ठीक अपनी तरह से चलाती है।

इस नाटक में नाटककार द्वारा अंजो का बाह्यवर्णन नहीं है। इसमें शारीरिक वर्णन को उभारा नहीं गया है, कुछ ही संकेत दिए गये हैं। वास्तव में 'अंजोदीदी' एक मनोवैज्ञानिक तथ्य को पकडा हुआ नाटक होने के कारण उसमें आंतरिक पक्ष का ज्यादा महत्व है और बाह्यचित्रण का नहीं। बस्स। नाटक के कुछ प्रयोग के तस्वीर से यह अंदाजा लगाया जा सकता है, कि अंजो सामान्यत: पतले, छरहरे बदनवाली है। परंतु जहाँतक उसके आतंक का जब प्रश्न उठता है, तो लगता है कि वह सुंदर तो नहीं, परंतु आकर्षक और रौबदार अवश्य है।

श्रीपत --

इस नाटक का सबसे जिंदादिल पात्र है श्रीपत, जो सलोने व्यक्तित्व का है। उसी के माध्यम से नाटक के सपाट गति से चलनेवाले घटना-व्यापार को ऐसे अप्रत्याशित मोड मिलते हैं, जिनकी चरम-परिणति अंजो के इंद्रजाल को झकझोर कर तोड देती है।

वैसे इस नाटक में पात्रों का शारीरिक वर्णन ठीक तरह से नहीं है, परंतु जहाँतक उसके जीवन दर्शन, मनोविज्ञान, आचार-व्यवहार का प्रश्न है, श्रीपत अंजो से तो-

ढाई वर्ष कम आयु का है, किंतु अंजो की तरह पतला-दुबला और कमजोर नहीं। वह मस्त हट्टा-कट्टा, ढीला-ढाला आदमी है।

श्रीपत पहले अंक में जब प्रवेश करता है, तो वह कीमती सिल्क का कुर्ता और लट्ठे का पाजामा पहने हुए था, कुर्ते के दो बटन खुले है, दोनों कपड़े तनिक मैले हैं। लम्बा, नगाड़ा, किंचित मोटा, कलाई में कीमती घड़ी और मुँह में स्टेट-एक्सप्रेस का सिगरेट। `[1] उसके इस व्यक्तित्व से ही वह रंगीन, सजीला युवक लगता है। बात-बातमें `कसम तुम्हारी` का प्रयोग करता है, उसके इस लहजे से उसकी जिंदादिली, मस्ती और सैलानी तबीयत का पता चलता है।

श्रीपत जिस जीवन-दर्शन का कायल है, वह अंजो की मान्यताओं का विलोम है। एक ही माँ-बाप के दो संतानों के जीवनक्रम में इतना अधिक पार्थक्य का होना असंभव भी नहीं है। मनोवैज्ञानिक धरातलपर इन दोनों परस्पर-विरोधी जीवन-दर्शनों का संगत विश्लेषण प्रस्तुत कर सकना कठिन नहीं है। बचपन में ही दोनों अलग अलग जगह पले हुए हैं। अंजो को उसके नाना ने गोद लिया था, इसीलिए वह अपने माँ-बाप और उनके घरेलू वातावरण के प्रभाव से अछूती रह सकी। किंतु श्रीपत को मस्ती और सैलानी मनोवृत्ति जन्मजात संस्कार के रूप में मिली और जिसे उसके घर के वातावरण ने और भी शोख रंग भर दिया। उसके घर में किसी किस्म का दमन नहीं, कोई आतंक नहीं और इसी बंधन-हीनता का जिक्र करते हुए वह मुन्नी से कहता है --

`कसम तुम्हारी मुन्नी! तुम चार दिन हमारे घर में रहकर तो देखो कितनी आजादी है वहाँ। दिन के हर वक्त तुम्हें वहाँ कोई-न-कोई नौकर सोता हुआ मिलेगा। (हँसता है।) जब मालिक सोते है, तो नौकर क्योंन सोये।` [2]

अंजो यदि जुल्म और आतंक की साकार प्रतिमा है, तो श्रीपत मस्ती और फक्कड़पन का मूर्त प्रतीक है। यह उसकी मस्ती और फक्कड़पन उसकी चाल-ढाल, पहनावे और बातचित से साफ झलकता है। उसे परवाह नहीं कि कुर्ते के बटन खुले

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पहला अंक - पृ. ६३।
२ - वही - ,, ,, पृ. ९१।

है या बंद । उसकी बातचीत के ढंग में भी एक अजीब-सा अपनापा और अनौपचारिकता है । जितनी वे तकल्लुफी से वह अंजो या कोलसाहब से बात कर सकता है, ठीक उसीतरह उस घर की नौकरानी से । उसके मानेमें कोई बड़ा या छोटा नहीं है ।

श्रीपत ही एक ऐसा पात्र है, जो अंजो के दमन और भयावह परिणामों के प्रति जागरूक है । यदि वह न आता तो अंजो का अत्याचार निर्विरोध चलता ही रहता । कोलसाहब और नीरज यद्यपि बाद में अंजो के दमन की भयंकरता महसूस करते हैं, लेकिन उनमें इतनी शक्ति नहीं है, कि वे खुलकर विद्रोह और विरोध कर सकें । कोलसाहब उसकी इच्छा के विरुध्द शराब पीते जरूर हैं, लेकिन चोरी से ।

श्रीपत के माध्यम से ही अंजो की सारी यांत्रिक व्यवस्था की गतिविधि में पहला व्यतिक्रम आता है । सनक की हद तक पहुँच जानेवाले अदब,कायदे,संयम की अतिशय पाबंदी खाने-पीने की परहेज-सब एक बार टूट जाते हैं और सभी पात्र अंजो के नियंत्रण और अनुशासन से दूर हटते नजर आने लगते हैं ... । कोलसाहब की बेपरवाह और सैलानी मनोवृत्तिपर अंजो ने व्यवस्था और संयम का जो मुलम्मा चढ़ा रखा है, वह श्रीपत के व्यक्तित्व की एक ही रगड से छूट जाता है और जिस व्यक्ति ने छ: वर्षों से चाट तक मुँह न लगायी थी, वह फिर से शराब पीना आरंभ कर देता है। नीरज की शिष्टता की तारीफ करते हुए जिस अंजो ने कहा था -- ' इतना बड़ा हो गया है नीरज कभी कान उमेठने की नौबत तक नहीं आयी ... ।'[1] चंद घंटों बाद वही अंजो उसी नीरज के कान खींचती हुई दिखायी पडती है । प्रथम अंक के प्रथम दृश्य में जो अन्नी अंजो के पास रहकर अपनी आदतें सुधारने की बात सोच रही थी, वही तीसरे दृश्यतक आते आते श्रीपत की ओर आकर्षित हुए बिना नहीं रह पाती । और अंजो के बढ़े हुए तेवर के बावजूद मुँह क लड्डू सा ही लेती है । यही नहीं,श्रीपत के झटके से घर के नौकर तक हिल जाते हैं ...। इसमें कोई संदेह नहीं, कि वह झंझा की तरह आता है और तूफान की तरह चला जाता है, किंतु अंजो के परिवार में उसका असर धूल की तरह इतना जमकर बैठ जाता है, कि वह मरकर भी उसे नहीं मिटा पाती । जाते-जाते वह जो कुछ अंजो से कह जाता है,वह कितने गहरे अर्थों से संयोजित है ।

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.५६ ।

"और अंजोदीदी नमस्ते । दुआ है, कि हमारे नानाजी का जादू तुम्हारे सिर से उतरे और तुम भी देखो, कि चाट आखिर कोई वैसी बुरी चीज नहीं..... ।"[1]

श्रीपत विवाह को एक बंधन मानता है । विवाह के बाद की औपचारिकता उसे कतई पसंद नहीं है । वह किसी भी शिष्टाचार में विश्वास नहीं करता । कहता है "शिष्टाचार शादी का, यों कह लो कि बंधन का प्रतीक है । उधर आपकी शादी हुई, इधर आप के गले में शिष्टाचार का जुआ पडा । ये आपकी सास हैं -- इनके सामने सिर नीचा किये शिष्टता से यों मुस्कराओ मानों आपके सारे दाँत झाड गये हैं । ये आपकी सलहज हैं - इनके सामने विनम्रता से ऐसे हँसो, मानो आपकी बतीसी मोतियों की है । ये आपकी पत्नी है - आचार-व्यवहार, सदाचार और शिष्टता की मौसी । इसीलिए वह शादी की कल्पना में ही खुश है, यही कारण है, कि वह हमेशा गाता रहता है, गुनगुनाता रहता है ।"[2]

श्रीपत मनमौजी जीव है, न किसी से शासित है, न नियंत्रित, इसीलिए उसे किसी का आदेश ठीक नहीं लगता । वह स्वयं ठीक कहता है - "ब्रह्मा का वाक्य और मेरा वाक्य एक बराबर है ।"[3] उसे इस दमन के प्रति सख्त नफरत है, जिसमें विचारों को दूसरों पर बलपूर्वक लादा जाता है । वह चाहता है कि जन्म-जात प्रतिमा को अनुकूल दिशाओं में मोडकर व्यक्तित्व की अन्तर्भूत संभावनाओं को विकसित किया जाये । इसीलिए नीरज को क्रिकेट का कप्तान और नीलम को कवि बनने के लिए प्रोत्साहित करता है । जब कि क्रमश: अंजो और ओमी उन्हें [illegible] बनाने का स्वप्न पालती रहती हैं ।

श्रीपत "अति" का विरोधी है और इसीलिए किसी भी तरह की सनक का जानी दुश्मन है, चाहे वह सनक अंजो में हो या स्वयं उसमें । जितनी निर्ममतासे वह अंजो के तिलस्म को ध्वस्त कर सकता है, उतनी ही बेरहमी से स्वयं अपनी दुर्बलताओं का भी मजाक उडा सकता है । यह कहना गलत नहीं होगा कि, श्रीपत में कोई सनक है, परंतु वह सभी तरह के पूर्वाग्रहों से मुक्त है और वास्तव में अंजो और उसकी सनक में यही मौलिक

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.१०४ ।
२ - वही - ,, पृ.७२ ।
३ - वही - ,, पृ.६७ ।

अंतर भी है । सनक किसी भी सामान्य प्रवृति की अतिवादी सीमा है और इसीलिए उसतक पहुँच जाना उतना बुरा नहीं है, जितना कि वहाँ पहुँचकर पीछे लौटने से इन्कार कर देना । श्रीपत को जैसे ही अपनी सनक का पता चलता है वह उसे 'एबनॉर्मल' मनोवृति समझकर छोड देता है । वह कहता भी है --' किसी भी बात को सनक की हदतक ले जाने का मैं कायल नहीं । जब मैंने देखा, कि मेरी वह आदत सनक बन रही है तो मैंने उसे छोड दिया ।'[१] परंतु अंजो के भीषाण अहं को यह गँवारा नहीं है । वास्तव में यह सारी सनक उसकी मार्बिड जिंदगी का एक 'नॉर्मल डेज' है, जिसके बगैर उसका जिंदा रहना भी मुश्किल है । इसके अलावा सनक की इस अनिवादी सीमा को छू कर लौट जाने के लिए जिस बौध्दिक संतुलन और स्वस्थ जीवन-दृष्टि की अपेक्षा होती है, उसका अंजो में सर्वथा अभाव है । इसके ठीक विपरीत श्रीपत का दृष्टिकोन वैज्ञानिक है । यद्यपि उसकी विश्लेषाण-प्रक्रिया उभरकर नहीं आती, क्योंकि उसका व्यक्तित्व मौजी, फक्कड, मुँहफट है । वह अंजो का तिलस्म उसके घर में सुबह-शाम बोतलें खुलें, काग उडें, शोर और धमाचौकडी मचे' इसलिए नहीं तोडता बल्कि इसे भी वह 'सनक की दूसरी हद' कहकर संतुलित जीवन-दर्शन का समर्थन करता है और अंजो के दमन के नीचे पिसे उसके परिवार के एक-एक प्राणी को बना देना चाहता है कि '... घडी मशीन है और इंसान मशीन नहीं । जब इंसान मशीन बन जायेगा, तो वह दुनिया के लिए सबसे बडे खतरे का दिन होगा । इन्सान का मशीन बनना सनक ही का दूसरा रुप है । अंजो यदि इसे समझाती, तो जीजाजी को चोरी से शराब पीने और उसे मरने की जरुरत न पडती....'[२]

श्रीपत अंजो की सनक को तोडता, किंतु उसकी इस विरोधी भावना का उद्रेक घृणा से नहीं होता । अंजो के प्रति उसका स्नेह और ममता कम नहीं है, यद्यपि इसे कहीं मुखर-अभिव्यक्ति नहीं मिली । उसके हृदय में बहिन के कृत्यपर जो वेदना-मिश्रित झुंझलाहट है, वह इसलिए कि उसने महज सनक की रक्षा के लिए अपना सारा जीवन चौपट कर दिया ।

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.१३३ ।

२ - वही - ,, पृ.१९० ।

यद्यपि श्रीपत भी अंजो के समान ही शक्तिशाली और क्रियात्मक पात्र है, फिर भी इस सारी जिंदादिली के बावजूद उसके चरित्रांकन में अतिरंजना अवश्य है। एक बात अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि हमारे यथार्थ जीवन में ऐसे मस्त और फक्कड पात्रों की कमी नहीं है और यह भी सच है कि प्राय: वे अपने अस्तित्व के बावजूद जीवन के कटु यथार्थ के संदर्भ में बेमेल और काल्पनिक लगते है। मस्ती के जिस आलम से वे घिरे रहते हैं, वह सत्य होते हुए भी, सहसा हमें यह विश्वास नहीं दिला पाता, कि जो कुछ हम देख रहे हैं, वह झूठ नहीं है। और चूँकि श्रीपत यथार्थ जीवन के इन्हीं पात्रों के अनुरूप गढ गया है, अत: उसके व्यक्तित्व की अतिरंजना केवल नाममात्र को अधिक है। श्रीपत के व्यक्तित्व के अतिरंजित यथार्थ की सबसे बडी सार्थकता और औचित्य यही है कि वह अंजो के जादू तोडने और एक संतुलित जीवन-दर्शन देने में समर्थ है।

श्रीपत लेखक का आदर्श नहीं, वह असंयम की अति का प्रतिनिधि है --

इंद्रनारायण --

इंद्रनारायण जब मंचपर प्रवेश करते हैं, तब वे अंजो से केवल आठ-दस वर्ष बडे बताये गये हैं, परंतु शरीर स्थूल है। अप-टू-डेट सूट पहने हैं। पतलून की क्रीज और कोट का कालर अभी प्रेस किये जैसे लगते हैं। अंजो के साथ बैठने पर बेमेल नहीं लगते। बेपरवाही वृति को उन्होंने अपने कोट में जकड के रखा है, जिनके कारण उनकी उन्मुक्त हँसी में बाधा आती है। बातें करते समय कन्धे झटकने की आदत पहले विवशतावश थी, अब स्वभाव बन गया है। वह स्वयं अपनी जिंदगी अपनी तरह से जी नहीं पाते। उन्होंने शादी के बाद अपने आपको अंजोमय बना दिया है --

'अरे भई, दुनिया में दो प्रकार के लोग होते हैं -- एक वे, जो आप भी चलते हैं और दूसरों को भी चलाते हैं, इंजन की तरह - अंजो उनमें से है। दूसरे वे जो आप नहीं चल पाते पर दूसरा कोई चलाये तो उसके पीछे पीछे आराम से चले जाते हैं गाडी के डिब्बों की तरह। तो भई, हम तो इन दूसरी तरह के लोगों में से हैं। अंजो उन्हें जिसप्रकार चलाती हैं बिना शिकायत चले जाते हैं।'[१]

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.५९।

अंजो ने उनको इतना परिवर्तित किया है, कि वे कहते हैं -- अंजो के साथ शादी करने के बाद लगता है जैसे हम तो अछूत थे, अंजो ने आकर हमारा उध्दार किया ।`[१]

अंजो को उन्होंने अपने ऊपर इतना आरोपित किया है, कि उनकी मस्ती, फक्कड़पन, उन्मुक्त ठहाके लुप्त होकर वे संजीदा दिखाई देने लगते हैं । श्रीपत कहता है -- `जब कि अभी आप एडवोकेट भी नहीं बने ... जब एक वकील जज नजर आने लगे तो समझिए कि वह बुड्ढा हो गया । वकील तो जवानी का प्रतीक है और जज बुढ़ापे का ।`[२]

अपने दिल की रंजिश वे श्रीपत के सामने यूँ प्रकट करते हैं --

`सुबह होती है शाम होती है,

उम्र यों ही तमाम होती है ।`[३]

इंद्रनारायण अंजो के दमन के शिकंजे में बुरी तरह जकड़े हुए हैं । विवाह के पहले वे भी श्रीपत की तरह मनमौजी, फक्कड़ और लापरवाह थे, परंतु उनका व्यक्तित्व इतना सशक्त नहीं है कि अंजो के आरोपित नियंत्रण और अनुशासन को ठुकरा सकें । उन्होंने अंजो के इस नियंत्रण को अपनी परिस्थितियों का यथार्थ अंग मानकर समझौता कर लिया है । श्रीपत के पूछनेपर वे कहते हैं `अरे भई, समझौता करना ही पडता है जीवन में ।`[४] और अंजो के `हाँ` `हाँ` में कभी-कभी नानाजी की दुहाई देने के लिए भी नहीं चूकते । किंतु यह नियंत्रण कभी भी - अंजो की मौत के पहले-उनके व्यक्तित्व का अंगभूत अंश नहीं बन पाता, भले ही उनकी पतलून की क्रीज और कोट का कालर अंजो की व्यवस्था और अनुशासन की डींग हाँकता रहे । उनके खोखले ठहाके उस बीती हुई मस्त और सैलानी जिंदगी के अवशेष हैं, जो अंजो की व्यवस्था और विधि-निषेधों के कारण उनसे छिन गयी हैं । और इसीलिए जैसे ही श्रीपत अंजो के नियंत्रण का तनाव थोडा ढीला करके उनकी निरीहता को उधार देता है, वैसे ही उनके अन्तर्मन में जिंदगी के पुराने ढर्रेपर लौट आने के लिए प्रतिक्रिया आरंभ हो जाती है । वही व्यक्ति, जो अंजो से फौजदारी के वकीलों के फूहडपन, अश्लीलता और चाट

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी-पृ. ६० ।

२ वही - ,, ७०।

३ - वही - ,, १६६।

४ - वही - ,, ८८ ।

खाने की गंदी आदत की शिकायत कर रहा था, कुछ घन्टे बाद ही श्रीपत की अश्लील बातचीत में पूरा रस ले सकता है, बगैर किसी हिचक के छँ साल का नियम भंग करके चाट खा सकता है और दिलकुशा में बैठकर शराब भी पी सकता है। किंतु अंजो की मौत के बाद उनका जीवन एक नयी दिशा की ओर मुडता है और वास्तव में यहीं उनके चरित्र का आकर्षण प्रारंभ होता है। यदि इन्हें पहले ही अंजो के आत्मघात की सूचना मिल जाए,तो संभव था कि झुंझलाहट से भरकर वे उसके आदर्शों की सर्वथा उपेक्षा कर देते किंतु अंजो के प्रति एक ग्लानि-मिश्रित आदर-भावना धीरे धीरे इतनी गाढी हो जाती है कि वे उसके जहर खाने की सूचना पाकर भी तडपकर केवल यही कह पाते हैं -- ' जरा-सी गलतीपर अपनी सनक में तुमने मेरे पांच बरस रेगिस्तान बना डाले अंजो, मैं तुम्हें क्या कहूं।'[१] अंजो का अंतिम प्रश्न उनकी मस्ती और असंयम को बुरीतरह झकझोरता है और आत्म-ग्लानि से भरकर वे जिस प्रकार उसकी मान्यताओं और विधि-निषेधों को सहेजते हैं, उसे देखकर आश्चर्य होता है। इसप्रकार उनका संयम और आत्मदमन आरोपित न होकर उनकी हार्दिक वृत्तियों से पुष्ट और समन्वित है।

वकीलसाहब के जीवन की ट्रेजेडी उनकी मन:स्थिति से प्रसूत है जो आदर्श और यथार्थ के तकाजों को एक साथ ही परितोष दे लेने में सक्षम है। इसीलिए वे अंजो को तोडने का समर्थन तो करते हैं, लेकिन अपने-आप को उसकी सनक के व्यामोहसे नहीं खींच पाते।

आदर्श और यथार्थ का यह संश्लिष्ट गुंफन उनके इन शब्दों में कितना मुखर है --

' नहीं भाई,मैं नहीं पी सकता। अंजो के जुल्म और उसकी सनक की बात मैं मानता हूं, पर जब उसने इस सनक के लिए अपनी जान देदी,तो मुझे उसकी रक्षा करनी ही चाहिए। जाने जीवन कितने दिन और है क्यों इन चंद दिनों के लिए उसकी आत्मा को कष्ट दूं।'[२] इंद्रनारायण अपने आप को अंजो के मौत का जिम्मेदार

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.१७१।

२ - वही - ,, पृ.१७२।

मानते हैं, इसलिए उसके जाने के बाद शराब पीना छोड देते हैं, संन्यासी जैसे विरक्त हो जाते हैं । अंजो जीवित रहकर इतना शायद वे नहीं बदलते पर उसकी मौत ने उनको जड से हिलाया है । उनकी फक्कड जिंदगी का यह करुण उपसंहार अपने पीछे एक गहरी व्यथा छोड जाता है ।

अन्नो --

नाटक के घटना-व्यापार में पड जानेवाली बीस वर्षोंकी दरार को अपनी उपस्थिति से जोडती है और दोनों अंकों के प्रथम दृश्यों में उसका लेस बुनते रहना ।कथा-क्रम में एकसूत्रता बनाये रखने का प्रतीक है ।

नाटक के प्रारंभ में अन्नो पच्चीस एक वर्ष की मंझाले कद और गदराये शरीर की युवती है, जो अविवाहित है, लेस बुन रही है । अन्निा उस मुक्त मृगी सी लगती है जो जाल के बंधन से अनभिज्ञ है, उसके बनाव-सिंगार और पहरावे से पूरी बेपरवाही टपकती है ।[१]

अंजो और अन्नो के जीवनगत अंतर को नाटककार ने रंगमंच निर्देश की एक ही टिप्पणी से स्पष्ट कर दिया है । अन्नो उसी घर और परिवार की थोडी वय-प्राप्त लडकी ,जहाँ के बच्चे आठ-आठ बजे तक सोते रहते हैं और उन्हें कान उमेठकर उमेठकर जगाना पडता है । किंतु इस लापरवाही के बावजूद उसके संयत व्यक्तित्व में कुछ इतना अधिक संकोच है,कि वह अपनी बडी-से-बडी हसरत और बडा-से-बडा दर्द खुलकर व्यक्त नहीं कर सकती, क्योंकि उसमें अपने उद्दाम मनोवेगों को भी संयत अभिव्यक्ति देने की अपूर्व क्षमता है और वास्तव में यही उसके व्यक्तित्व की सबसे बडी ट्रेजेडी है । वह श्रीपत के प्रति आकर्षित है,किंतु संकोचवश उसका संमोहन मुखर होकर व्यक्त नहीं हो पाता । फलत: वह शादी के सपने ही पालती रह जाती है । [illegible] अन्नो दूसरे अंक में वह अपेक्षाकृत अधिक मुखर है किंतु फिर भी जबान से कम चेष्टाओं से अधिक । सिगरेट का टुकडा उठाकर श्रीपत के मुँह में रखना,पहले से ही दियासलाई लेने आना और सिगरेट

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - वस्तुपक्ष ।

सुलगाना आदि चेष्टाएँ इतनी अर्थपूर्ण हैं, कि इसके कुँवारे जीवन का अनकहा दर्द एक साथ उभरकर फूट पडता है। कभी-कभी तो यह निर्णय करना कठिन हो जाता है, कि इस नाटक में अंजो की ट्रेजेडी अधिक है अथवा अन्नो की ? ट्रेजेडी वास्तव में दोनों की है - अंजो की व्यक्त है तो अन्नो की अव्यक्त।

नीरज--

अंजो और इंद्रनारायणजी का बेटा है। अंजो के जुल्म के दुष्परिणामों का सजीव प्रतीक है।

नाटक के प्रारंभ में नीरज पर अपनी माँ अंजो का आदेश प्रभावित करता है। माँ के संस्कार को वह न चाहते हुए भी पालता रहता है। सभ्यता और शिष्टाचार की कमी छोटी उमर में नहीं है। वह अनिमा को बडे आदर से नमस्ते करता है। समय पर पढता है,समयपर आराम करता है, समयपर खेलता है। अपना सारा काम अपने आप करने की आदत उसने पाल रखी है।

नाटक के पहले अंक में रंगमंच निर्देश की टिप्पणी में नीरज का चरित्र खींचा गया है। नीरज दस-ग्यारह वर्ष का बच्चा है। नीली बुशशर्ट और सफेद नेकर पहने, सुंदर,सुकुमार और सुसंस्कृत है। चेहरा गंभीर है। बालसुलभ-चंचलता का उसमें सर्वथा अभाव है। उसकी चाल उस बछडे की सी है जिसने गले में बँधी रस्सी के साथ समझौता कर लिया हो।'[१] वह क्रिकेट कप्तान बनना चाहता है, परंतु अंजो उसे डिप्टी कमिश्नर बनाना चाहती है।

नाटक के दूसरे अंक में २० वर्षों के अंतराल के बाद जब नीरज प्रवेश करता है 'काफी बदला है, उसकी शादी हो चुकी है, अब वह सिटी मेजिस्ट्रेट हो गया है। वह अब काफी स्पष्ट वक्तव्य करता भी है। उसके अनुसार कोई भला आदमी सफल मेजिस्ट्रेट या कलक्टर हो ही नहीं सकता।'[२] वह डिप्टी कमिश्नर नहीं बना न ही

---

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.७४।

२ - वही - ,, ,, पृ.१२५।

क्रिकेट का कप्तान । वह ओमी से कहता है मैं तो बना ही था क्रिकेट का कप्तान होने के लिए । पर ममी पीछे पडी थी मुझे आई.सी.एस.बनाने के । मन क्रिकेट में आँखे पढाई में । परिणाम तुम्हारे सामने है । न क्रिकेट के कप्तान बने न आई.सी.एस.।

अपनी माँ अंजो के बारे में वह कहता है --- `और मैं कहता हूँ, कि ममी स्वयं ब्रेक थी । जबतक वे जीवित रही, उन्होंने इस घर के जीवनपर ब्रेक लगा रखी । उसे स्वतंत्रता से बढने-फूलने नहीं दिया और जब मर गयी तो ब्रेक लगाती गयी ।`[2] बचपन में उसकी जिस स्वाभाविक बाल-सुलभ-चंचलता को औपचारिक शिष्टता ने दबोच लिया था, वह कालांतर में एक बनावटी और छूछे फक्कडपन के रूप में सिर उठाती है । किंतु यह कितनी बडी नाटकीय विडंबना (Dramatic Irony), है, कि अंजो अपने जिस बेटे को सभ्य और शिष्ट बनाने के लिए मर मिटी, वही आगे चलकर शिष्टता का मखौल उडाता है और उसकी पत्नी ओमी को भी उसकी बातचीत में एक लोफर का अंदाज दिखाई पडता है ।

नीरज के चरित्र की सबसे बडी विडंबना यह है, कि अपनी माँ अंजो के जिस दमन का वह शिकार था, उसी की पुनरावृत्ति वह बाप बनकर अपने बेटे नीलम के साथ करता है । वह क्रिकेट का कप्तान बनाकर अपनी उस आकांक्षा को फलीभूत करना चाहता है, जिसे वह अंजो के नियंत्रण के कारण अपने-जीवन में साकार न कर सका था । मनोवैज्ञानिक आधार लेकर पीढी-दर-पीढी चलनेवाली यह कुंठा नाटक की मूलभूत समस्या है ।

ओमी --

ओमी अंजो की पुत्रवधू है । ओमी की चाल-ढाल, रंग-रूप, सब अंजोदीदी सा है । बस सूरत अलग है । पतला छरहरा शरीर वही, दुर्बल नसे वही, उन्नत ललाट पर हल्के तेवर वही लगता है, अंजोदीदी का दूसरा रूप धरती पर उतर आया है ।

---

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.१२६ ।

२ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.१११ ।

वह अपनी सास की इच्छाओं का पालन करना वह अपना परमकर्तव्य कहती हैं। वह भी ठीक आठ बजे नाश्ता लगाती है, । वह अनिमा को कहती भी है कि, 'मंदिर में जैसे पूजा का समय बँधा होता है और पुजारी चूक जाय तो दिनभर उसके मन में खटक रहती है कि उससे अपराध बन आया है, इसी तरह मुझे भी लगा कि आठ बजे नाश्ता मेजपर न आया तो भारी अपराध हो जायेगा।' [1]

ओमी अपने ससुर इंद्रनारायण के प्रति कापनी संवेदनशील हैं। उनकी हरतरह से तीमारदारी करती हैं। स्वयं नाश्ता लेकर जाती हैं। ओमी अंजो की प्रतिच्छाया है और इसीलिए अंजो का प्रतिनिधि बनकर भी वह अंजो नहीं है। न तो उसमें अंजो जैसा अखंड अहं है और न ही उसके जैसा व्यक्तित्व है। उसका अपने पति नीरज पर भी वैसा नियंत्रण नहीं है, जैसा अंजो का श्रीपतसाहबपर था। अपनी सनक के प्रति उसका आग्रह भी अधिक दृढ नहीं लगता। वह बीच के मार्गपर चलना चाहती है। आफिस में श्रीपतसाहब के शराब पीने से भी अंजो के अहं को ठेस लगती थी, किंतु नीरज यदि अपने यहाँ अथवा डाइनिंग रूम व ड्राइंग रूम को छोडकर कहीं भी शराब पीने की व्यवस्था कर ले,तो उसे कोई ऐतराज नहीं है। किंतु लेखक को उसके माध्यम से जिस नाटकीय प्रयोजन की सिध्दि अभिप्रेत थी,उसमें कोई भी त्रुटि नहीं आने पायी और वह अंजो को उसकी मौत के बावजूद जिलाये रखने में समर्थ है। यह अंजो की ट्रेजेडी है इसीलिए उसकी प्रतिच्छाया ओमी भी नाटक में परिव्याप्त ट्रेजिक प्रभाव से अछूती नहीं रह सकी। उसे अंजो की और और इसीलए अपनी भी मान्यताओं और सनक का खून होते हुए देखना पडा है -- वास्तव में अंजो की यह अशरीरी ट्रेजेडी उसके शरीरी अवसान से कहीं अधिक करुणा और विषादमय है। [1]

इसके अलावा मुन्नी,राघू उनके घर के नौकर हैं, जिन्होंने अंजो को देखा है, और ओमी को भी देखा है। इन दोनों पर अंजो की सफाई-पसन्दगी का प्रभाव पडा है। वे साफ-सुथरे कपडे पहनते हैं कि उन्हें देखकर अनिमा और श्रीपत भी

---

1 श्री सतीशचंद्र श्रीवास्तव · अंजोदीदी : एक मूल्यांकन · पृष्ठ - ११२

आश्चर्यचकित होते हैं । उनका भी एक नियमित समय है दिनचर्या का । अपने अपने नुसार राधू और मुन्नी ठीक हैं । एक और पात्र हैं - नजीर और नीलम । नजीर-नीरज का दोस्त है ठीक उसी की प्रवृति जैसा रंगीला, शोख । नीलम, नीरज, ओमी का बेटा, जो अपने माँ-बाप के अनुशासन के तहत् अथवा नैसर्गिक रुझान के प्रति अप्रमाणिक है । अपनी तरह से तय नहीं कर पाता ।

निष्कर्ष --

`अंजोदीदी` नाटक के चरित्रांकन में नाटककार अश्क ने अपना पूरा कौशल्य दिखाया है । संपूर्ण नाटक में `अंजो` ही इसकी प्रमुख है । सारे कथासूत्र उसी के हाथ में है । `अंजली` इस नाटक की नायिका है और आधुनिक दृष्टि से वह सही नायिका सिध्द होती है । उसके बाद सबसे सशक्त मस्त तबीयत का और नाटककार के आदर्श का विलोम श्रीपत सारे नाटक में संपूर्णत: हावी रहता है । इसके साथ ही ओमी, `अंजो` के पति इंद्रनारायण वकील, उनके बेटे नीरज का चित्रण है । राधू, मुन्नी, नजीर, नीलम आदि का संक्षिप्त चरित्रचित्रण है । इनका कोई अलग व्यक्तित्व नहीं है । सच बात तो यह है, कि अंजो का आतंक श्रीपत को छोडकर बाकी सभी पात्रों पर हावी है । नाटककार ने रंगमंच टिप्पणी द्वारा इनका शारीरिक व्यक्तित्व प्रदर्शित किया है । वास्तव में इसमें मानसिक जगत का ज्यादा समावेश है, इसलिए नाटक के सारे पात्र मनोवैज्ञानिक धरातलपर हैं । चरित्रांकन की कसौटीपर नाटक पूरा उतरता है ।

कथोपकथन । संवाद --

संवाद नाटक के मूल विधायक तत्वों में अग्र स्थान के अधिकारी होते हैं, क्योंकि संवादों के द्वारा ही पात्रों का चरित्र-चित्रण एवं कथावस्तु का विकास संभव होता है। साहित्य की प्रत्येक विधा में इसी लिए संवादों को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है और यह उनकी गरिमा का ही परिचायक है। लेकिन अन्य साहित्यिक विधाओं में जहाँ स्रष्टा को इस सम्बन्ध में स्वतंत्रता रहती है, कि वह संवादों के अतिरिक्त अन्य ढंग से भी कथानक को समग्रता प्रदान कर सकता है, वहाँ नाटककार को यह छूट बिल्कुल भी नहीं रहती। संवादों के अतिरिक्त अन्य ढंग से भी कथानक को समग्रता प्रदान कर सकता है। इन्हीं बातों को लेकर जो संवाद लिखे जाते हैं वे ही सफल होते हैं। कथानक जितना अधिक पात्रानुकूल, स्वाभाविक, अभिनयात्मक, संक्षिप्त, सरल एवं प्रभावक होगा। घटना और चरित्रों में उतनी ही सजीवता आ सकेगी। इसलिए प्रकृत्या नाटकार में चुस्त, चुटीले एवं प्रसंगानुकूल संवाद प्रस्तुत करने की अद्भुत क्षमता होनी चाहिए। सुगठित संवादों से कृति में एक विशिष्ट वातावरण की गरिमा के साथ स्पंदनपूर्व जीवन भी परिप्लावित होने लगता है। नाटककार के कौशल की परीक्षा भी इसी में होती है, कि उसके संवादों के माध्यम से ही अपने विचार अथवा उद्देश्य को दर्शकों-पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है, इसलिए नाटकों में संवादों की महत्ता अधिक है। पात्रों के संवाद ही आगे की कथा को संकेतित करते हैं तथा पात्र की प्रकृति और उसके व्यक्तित्व का बहुत कुछ आभास उसके कथनों और कथनगत भंगिमा से मिल जाता है।

नाटकीय संवादों की विशेषताओं की विवेचना करते हुए डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल लिखते हैं -- 'अरस्तू ने ड्रामा का एक तत्व - 'भाषा' बताया है, वे शब्द, जो पात्रों के रूप में मंच पर अभिनेता बोलता है। यह वह माध्यम है, जिसके द्वारा पात्र अपने विचार और अंत नाटक के विचार दर्शकतक सम्प्रेषित करते हैं।' अरस्तू के कथन के प्रति अपनी स्वीकारोक्ति में डॉ. लाल यह कहना चाहते हैं, कि भाषा की सम्प्रेषणीयता ही पात्र और प्रेक्षक में सीधे एकात्म बोध स्थापित करती है और

यह तादात्म्य ही किसी भी नाटक की सफलता का मानदंड बनकर उसे यशस्वी कृति का दर्जा दिलाता है। डॉ.लाल का इस संदर्भ में स्पष्ट कहना है` भाषा कथोपकथन के ही रूप में नाटक में मूलत: व्यक्त होती है। फलत: स्पष्टता, सीधेपन के अतिरिक्त उसे मनोरंजक होना आवश्यक है। वरना दर्शक के लिए उसे ग्रहण करना रुचिकर ही न हो सकेगा। भाषा को जीवन और चरित्र की आत्मा को पकड़कर चलना होता है। भाषा के प्रयोग के लिए नाटककार को कवि की दृष्टि चाहिए। वही गति वही पैठ।`[1]

नाट्यक्षेत्र के प्रमुख नाटककार उपेंद्रनाथ अश्क को संवाद-लेखन में गजब की महारत हासिल है। उनके संवादों में जो त्वरा और तीक्ष्णता और अनुकूलता है - मानना पड़ेगा। अश्क के वैविध्यपूर्ण जीवन के अनुभव ने, साथ ही अश्क नाटककार के साथ निर्देशक एवं अभिनेता होने के साथ रंगमंच के अपने व्यापक अनुभव और अपनी नाटकीय सूझ-बूझ का परिचय है, इसलिए उनके सभी नाटक खेले गये हैं। `अंजोदीदी` नाटक में अश्कजी पात्रों के मनोनुकूल शब्दों के अर्थ को इतने व्यापक धरातलपर प्रतिष्ठित करना चाहते हैं, जिसके आगे राह नहीं होती। इस नाटक के संवादों में ऐसी तल्खी है और स्वाभाविकता है, वह नाटक को मात्र नाटक नहीं रहने देती, वरन् उसे प्रेक्षक मुक्त यथार्थ बनाकर छोड देती है।

नाटक में प्राय: दो प्रकार के संवाद प्रयुक्त किए जाते हैं -- दीर्घ और संक्षिप्त संवाद। जहाँतक नाटक में नाटकीयता की सृष्टि का प्रश्न है, उसके लिए संक्षिप्त संवाद ही श्रेयस्कर और उपयुक्त समझे जाते हैं और इस दृष्टि से `अंजोदीदी` में ज्यादातर संक्षिप्त ही संवाद हैं। `अंजोदीदी` में श्रीपत के संवाद सबसे अधिक सटीक और सार्थक हैं। श्रीपत को प्रकट करके नाटककारने नाटकीय सफलता को अग्रसर किया है।

---

१ डॉ.लक्ष्मीनारायण लाल - रंगमंच और नाटक की भूमिका - पृ.१२० ।

संक्षिप्त संवाद योजना --

`अंजोदीदी` में कथा के विकास,पात्रों के क्रियाकलाप,वातावरण के चित्रण, लेखकीय उद्देश्य की पूर्ति के लिए उपेंद्रनाथ अश्क जी ने सानुकूल संवाद प्रस्तुत किये हैं। उनके कुछ संवाद तो एक-एक शब्द के ही हैं और कुछ संवाद एक दो कथानों-उपकथनोंतक चलते हैं। अपने अभिव्यंजना कौशल से नाटककारने एक-एक ,दो-दो शब्दों में ही सम्पूर्ण अर्थ को व्यंजित किया है। साथ ही साथ पात्रों की मनोदशा को भी प्रस्तुत किया है -- उदा --

अंजली - हमारे नानाजी कहा करते थे, नौकरों को सदा साफ सुथरा रखना चाहिए। जैसे घर के भाग्य का पता देहरी से चलता है वैसे ही स्वामी के स्तर का पता नौकरों के पहरावे से लगता है। यदि नौकरों से नानाजी को बडी चिढ थी,उनके साथ रहकर मैं भी वैसी ही हो गयी। मैं तो चाहती हूं कि नीरज भी सफाई-पसंद सभ्य और सलीकेवाला बने।[1]

अनिमा - बडा प्यारा बच्चा है नीरज,इधर से गुजरा तो मुझे दोनों हाथ जोडकर नमस्कार किया।

अंजली - - (फूलकर) सभ्यता और शिष्टाचार की कमी तुम उसमें न पाओगी। (उठती है और अंदर के दरवाजे पर आवाज देती है।) हो गया तैयार नीरज बेटे ?

नीरज - (पृष्ठ-भूमि में) जी ममी।

अंजली - (फिर पर्दे के पीछे दरवाजेपर जाकर नौकरानी को आवाज देती है)

मुन्नी,नीरज बेटे को नाश्ता दे दो।

मुन्नी - (पृष्ठभूमि में) दे रही हूं मेमसाहब।`[2]

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.५४।

२ - वही - ,, पृ.५५।

दीर्घ-संभाषण -- योजना --

इस प्रकार के संवाद लंबे, विस्तृत, कहीं कहीं वक्तव्य जैसे लगते हैं । `अंजोदीदी` में अश्कजी ने कहीं-कहीं लंबे संभाषण प्रयुक्त किये गये हैं । इन संवादों की दीर्घता का कारण यह है कि नाटककार ने पात्रों का मनोविश्लेषण उनके संवादों के माध्यम से किया है । इन संवादों में जो विस्तार हैं, वह पात्रों की स्थिति को पूर्णत: प्रदान करने के लिए ही किया है । निश्चय ही लंबे संवाद अभिनय की दृष्टि से अवांछनीय होते हैं परंतु ये संवाद नाटक को संहिति और सामासिकता प्रदान करते हैं, स्मृत्यालोक की पध्दति से दर्शक मन-स्पटलपर विविध दृश्यों की अवतारणा करते हैं और नाटक को दृश्य बहुत्व और विस्तार से बचाते हैं । -- उदा --

अनिमा - (अपने प्याले में चाय ढालते हुए) मैं पूछती हूँ, क्या आप किसी प्रकार के शिष्टाचार में विश्वास नहीं रखते ?

श्रीपत - (हँसकर) किसी प्रकार के भी नहीं । शिष्टाचार शादी का हो, यों कह लो कि बंधन का प्रतीक है । उधर आपकी शादी हुई, इधर आपके गले में शिष्टाचार का जुआ पडा है । ये आपकी सास हैं - इनके सामने सिर नीचा किये शिष्टता से यों मुस्कराओ, मानों सारे दाँत झड गये हैं । ये आपकी सलहज हैं - इनके सामने क्षिप्रता से ऐसे हँसो, मानो आपकी बतीसी मोतियों की है । ये आपकी पत्नी हैं - आचार-व्यवहार के सभी कायदे-कानून विवाहित लोगों के अधेड दिमागों की उपज है । इसलिए मैं ब्याह कल्पना ही करता हूँ, उसके बंधन में मैं नहीं फँसता (सहसा अनिमा की ओर मुडकर) क्यों अन्नी, क्या तुम भी शादी-वादी करना चाहती हो या तुम्हें भी मेरी तरह ब्याह के सपने देखना ही पसंद है ? [1]

---

1 उपेंद्रनाथ अश्क -अंजोदीदी - पृ.७२ ।

उक्त संवाद मंजे कलाकार को ही सार्थक है । नये कलाकार के अभिनय में अवश्य बाधक बन सकता है ।

'अंजोदीदी' नाटक के संवाद मानवीय यथार्थ को स्पर्श करते चलते हैं । उनमें कहीं भी कल्पना की अतिरंजना, अस्वाभाविकता या नीरसता नहीं है । मार्मिकता, स्वाभाविकता और प्रभुविष्णुता की दृष्टि से ये संवाद अपना विशिष्ट महत्व रखते हैं ।

संवादों के प्रमुख गुण --

१) स्वाभाविकता २) पात्रानुकूलता ३) सरलता ४) संक्षिप्तता
५) अवसरानुकूलता ६) गतिशीलता ७) मनोरंजनपूर्णता ८) व्यंग्यात्मकता
९) रोचकता १०) उपयुक्तता ११) सम्बध्दता १२) मनोवैज्ञानिकता
१३) यथार्थपरकता १४) चरित्रप्रकाशन की क्षमता १५) मार्मिकता
१६) नाटकीयता १७) विश्लेषणात्मकता १८) प्रभाव-क्षमता ।

'अंजोदीदी' में इन सभी गुणों का पर्याप्त समावेश है । जहाँ तक स्वाभाविकता का सवाल है, अंजोदीदी के संवाद स्वाभाविक हैं । अंजली, श्रीपत, इंद्रनारायण इनके संवादों में कहीं भी अस्वाभाविकता नजर नहीं होती । 'अंजोदीदी' के पात्रों के सभी संवाद बौध्दिक, सामाजिक, सांस्कृतिक स्तर के अनुकूल हैं । यह अनुकूलता भाषा, भाव, विचार, रहन सहन एवं ध्वनि सभी के संदर्भ में कही जा सकती है । 'अंजोदीदी' के संवादों में यह गुण पर्याप्त है ।

नाटकीय संवादों में सरलता का होना, उसके प्रेषण, पठन, स्वाभाविकता के लिए अपरिहार्य है । 'अंजोदीदी' में जन-सामान्य की आम-फहम भाषा को संवादों में ऐसा सुव्यवस्थित किया गया है, कि यह नाटक, नाटक न लगकर अपने आस-पास का पूर्ण और साकार दृश्य महसूस होता है ।

'अंजोदीदी' के संवाद गतिशील भी हैं । नाटक के संवादों को सहज-संवेद्य बनाने के लिए कतिपय स्थलोंपर मनोरंजकता का पुट देना भी आवश्यक होता है । बीच-बीच में हल्के-फुल्के हास्यपरक संवादों की संयोजना नाटक में जरूरी हो जाती है, कि दर्शक के मस्तिष्क को चिंतन से मुक्ति मिल सके और कुछ क्षणों के लिए हँसी के बीच वह अपनी मानसिक उत्तेजना से मुक्त हो जाय । 'अंजोदीदी' के श्रीपत के संवाद बिल्कुल

सटीक और हास्य-व्यंग्यपूर्ण हैं ।

`अंजोदीदी` के संवादों में व्यंग्यात्मकता, उपयुक्तता, सम्बध्दता, यथार्थपरकता, मनोवैज्ञानिकता, चरित्र-प्रकाशन की क्षमता, मार्मिकता, नाटकीयता आदि सभी गुण हैं । इसीकारण `अंजोदीदी` एक श्रेष्ठ अभिनेय नाटक बन पडा हैं ।

निष्कर्ष --

`अंजोदीदी` के संवाद मानवीय यथार्थ को स्पर्श करते हैं । मार्मिकता, स्वाभाविकता और प्रभविष्णुता की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं । संवादों के प्रमुख गुण स्वाभाविकता, पात्रानुकूलता, सरलता, संक्षिप्तता, अवसरानुकूलता, गतिशीलता, मनोरंजनपूर्णता, व्यंग्यात्मकता, रोचकता, उपयुक्तता, सम्बध्दता, मनोवैज्ञानिकता, यथार्थपरकता, चरित्रप्रकाश की क्षमता, नाटकीयता, विश्लेषणात्मकता और प्रभाव-क्षमता आदि गुण `अंजोदीदी` के संवादों में प्राप्त हैं । `अंजोदीदी` के संवादों के कारण अंजोदीदी एक श्रेष्ठ अभिनेय नाटक बन पडा हैं ।

देशकाल एवं वातावरण --

किसी भी कथात्मक साहित्यिक विधा में कथ्य को सजीव, यथार्थपरक एवं अनुभूतिप्रवण बनाने के लिए उससे सम्बध्द देशकाल एवं वातावरण का प्रस्तुत करना परमावश्यक है और नाटक चूंकि दृश्यकाव्य के अंतर्गत परिगणित होता है, इसलिए उसमें इस तत्व की उपस्थिति और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती हैं । नाटकीय कथानक को प्रभविष्णु बनाने में कथ्य से सम्बध्द युग एवं तत्कालीन परिवेश, युगीन व्यक्तियों के वस्त्र, रहन-सहन, खान-पान एवं भाषा यदि रंगमंचपर दर्शक देखता हैं, तो उसके समक्ष वह युग साकार हो उठता हैं, जिसके परिप्रेक्ष्य में नाटक की कथा प्रस्तुत की जाती हैं । वातावरण केवल स्थूल परिवेश के चित्रण के द्वारा ही सिध्द नहीं होगा उसके लिए स्थिति के अन्त: प्रवेश द्वारा घटनाओं और मानवमन का पूर्ण चित्र प्रस्तुत करने में सहायक सिध्द होना भी वांछनीय हैं । परंतु यह ध्यातव्य हैं कि नाटक के कथ्य को सजीव रुप में प्रस्तुत करने में वातावरण केवल एक साधन हैं

इसलिए नाटककार को हमेशा यह ध्यान रखना चाहिए, कि वह उतना ही देशकाल एवं वातावरण प्रस्तुत करें, जितना कथ्य को सम्प्रेषणीय बनाने में सहायक हो ।

नाटकीय कथा में देशकाल वातावरण बहिरंग पक्ष है और पात्रों की मनोदशा का चित्रण प्रस्तुतीकरण उसका अंतरंग पक्ष है और इन दोनों के समन्वित रूप में उपस्थित रहने से ही कथ्य प्रभावी हो सकता है । वातावरण की उपेक्षा अथवा प्रतिकूलता से पात्र की मानसिक स्थिति की सजीवता, घटना की मर्मस्पर्शिता, रोचकता पर्याप्त मात्रा में आहत होती है । इसलिए नाटककार को देशकाल की सभ्यता और संस्कृति चेतना का विशेषज्ञ होना चाहिए ।

हिंदी नाट्य साहित्य में प्रसाद जैसा कोई नाट्य-शिल्पी अभीतक नहीं हुआ, जिसके नाटक में उनके जैसा सजीव एवं गरिमायुक्त वातावरण तथा देशकाल प्रस्तुत करने की क्षमता हो । उपेंद्रनाथ अश्कजी के नाटकों में प्रसाद के जैसा वातावरण उपलब्ध तो नहीं है, परंतु जितना भी है, नाटकीय कथानक के सर्वथा अनुकूल है ।

' अंजोदीदी ' वर्तमान के मूल्यविघटन से उत्पन्न पारिवारिक संत्रासबोध एवं मध्यवर्गीय पारिवारिक तनाव को प्रस्तुत करता है । इसमें बाह्य देशकाल इतना नहीं है जितना कि पात्रों के मानसिक उतार-चढाव । इसमें ' अंजोदीदी ' जैसी सख्त, अहंवादी औरत की मानसिकता, रहन-सहन, खान-पान, वेष-भूषा, भाषा भी प्रखर रूप में उद्घाटित हो गयी है ।

पूरा वातावरण १९३२ और मार्च १९४८ के बीच का है । अंजोदीदी की वस्तु भी इसीप्रकार के कठोर दमन और विचारों को लादने के जुल्म की कहानी है, जिसे नाटककार ने आभिजात्य वर्ग की नारी अंजो के माध्यम से प्रस्तुत किया है । वास्तव में विचारों को लादने की यह प्रवृति विशिष्ट देश, काल और वर्ग के दायरे में आबध्द न हो कर शाश्वत और सार्वभौम है इसीलिए अंजली, श्रीपत, वकीलसाहब और नीरज, जैसे पात्र उच्च-मध्य-वर्ग में भी मिल सकते हैं, निम्न-मध्यम-वर्ग भी ।

अंजो ही इस नाटक की मेरुदण्ड है और कथा के सारे सूत्र उसके व्यक्तित्व से गूँथे हुए हैं । इसलिए नाटक की सारी परिस्थितियाँ उसकी क्रियाकलापोंपर ही

आधारित है । असल में इस नाटक में वातावरण की गुंजाइश नहीं है और है भी, तो केवल मानसिक क्रियाकलापों द्वारा ही । अंजो एक अभिजात्य परिवार की पत्नी है, माँ है । उसके लिए उसके नानाजी द्वारा दिए गये शिक्षा-वचन ही प्रमुख हैं । नाटक के पहले अंक का पहला दृश्य ही अंजो के कलात्मक दृष्टि की साक्षा देता है । श्री इंद्रनारायण वकील की भव्य कोठी, उसका बडा हाल, जिसे लकडी के सुंदर पर्दे की सहायता से भोजनकक्ष तथा ड्राँइंगरूम में बदल दिया गया है । कोठी चूँकि दहेज में मिली है, इसीलिए 'अंजोदीदी' के नाम से प्रसिध्द है ।

बायी ओर के आधे भाग में खाने की मेज और छः कुर्सियाँ हैं । सामने एक दर्शनीय साइड-बोर्ड है, जिसमें चाय की प्लेटें, प्यालें, काँटे, छुरियाँ और चीनी के अन्य बर्तन पडे हैं । एक कोने में तिपाई पर चिलमची रखी है और ऊपर खूँटीपर तौलियाँ टँगा है । छतपर बिजली का पंखा मन्थर गति से चल रहा है । सभी कमरे एकदम साफ हैं ।

इस दृश्य से ही पता चलता है, कि 'अंजोदीदी' की नायिका अभिजात कलात्मक एवं मध्यम-वर्गीय परिवार की सुंदर दृष्टिवाली है । साथ ही समयनिष्ठा उसका मूलाधार है । नाटक के प्रारंभ में ही घडी में आठ बजने को है --

अंजली - मुन्नी नाश्ता रखो मेजपर (तनिक कडे स्वरमें)
तुम कर क्या रही हो ? आठ बजने को आये हैं और नाश्ते का कहीं पता नहीं ।'[१]
(अंजली फिर खटखट करती हुई, अंदर के दरवाजेपर जाकर बच्चे को आवाज देती हैं ।)

अंजली का 'तनिक कडे स्वर में कहना' इस बात का द्योतक है, कि ठीक आठ बजे सभी नाश्ता करने बैठे । अंजली अनिमा से कहती है ---

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.४९ ।

अंजली - `जीवन स्वयं एक महान घडी है । प्रात: संध्या उसकी सुइयाँ हैं । नियमबध्द एकदूसरी के पीछे घूमती रहती हैं । मैं चाहती हूँ - मेरा घर भी घडी ही की तरह चले । हम सब उसके पुर्जे बन जायँ और नियमपूर्वक अपना-अपना काम करते जायँ ।` [१]

इससे आधुनिक जीवन की नियती यह है कि आदमी को समय की नब्जपर हाथ रखना चाहिए,समय के साथ चलना चाहिए,बोध होता है ।

पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण भी इस नाटक में हुआ है । कठोर जुल्म एवं आतंक की पीडा से दबा हुआ नाटक का हरेक पात्र अपने आप में (श्रीपत को छोडकर) डरपोक है । सभी के विचार अलग अलग हैं, मगर वे उन विचारों को अंजोदिदी के आतंक के सामने ले आने को कतराते हैं । स्वयं उसके पति इंद्रनारायण दब्बू प्रकृति का बन हँसना ही भूल गये हैं । वो स्वयं कहते हैं --`अंजो के साथ शादी करने के बाद लगता है,जैसे हम तो अछूत थे, अंजो ने आकर हमारा उध्दार किया ।`[२] इतना ही नहीं,नीरज, ओमी उसी के अनुसार चलते हैं । उसकी मृत्यु के बाद भी अंजो का अस्तित्व छाया रहता है, यहीं इस नाटक के वातावरण की सघनता है । श्रीपत, केवल एक ही पात्र है जो अंजो के तिलस्म को तोडना जरूरी समझता है ; वह मस्तमौला, रोबदार,रंगीन,सैलानी,मस्त तबीयत का फक्कड जीव है । वह किसी भी शिष्टाचार में विश्वास नहीं रखता । श्रीपत `ब्रेक` की तरह उपस्थित हो सनक की अतिवादी सीमा को पहचान कर रोकता है । वह कहता है --`मैं कहता हूँ दीदी, तुम जरूर सेना में भरती हो जाओ । गृहस्थी ने तुम्हारे गुणों को मटियामेट कर दिया है ।`[3]

पात्रों के हावभाव और अंतर्द्वन्द्व का चित्रण भी इसमें है --

श्रीपत - (बढकर वकीलसाहब के कंधो को थपथपाते हुए) मैं कहता हूँ, क्या हो गया जीजाजी आपको ? कसम आपकी,आप तो बिल्कुल बदल गये । क्या तिलांजली दे दी जीवन के रस-रंग को आपने ?

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.५७।

२ - वही - , पृ.६०।

३ - वही - ,, पृ.७३ ।

इंद्रनारायण - (दीर्घ नि:श्वास भरते हुए कन्धे झटकाकर)
अरे भाई समझौता करना ही पडता है जीवन में .....

श्रीपत - समझौता ही किया है न आपने ? (शरारत से आँख दबाते हुए हँसता है) समझौता अवश्य करना चाहिए । तो फिर `दिलकुशा ` के कवन का क्या रहा ? आज मेरे मित्र आ रहे हैं,एक सांझ तो गुजारी जाय वहाँ ।

इंद्रनारायण - नहीं भाई मैंने तो....."[1]

इससे श्रीपत और इंद्रनारायणजी के अंतर्द्वन्द्व का चित्रण मिलता है । नाटककारने अंजो के आतंक को स्पष्ट किया है और उसके शिकार बने सभी लोगों की मानसिकता को स्पष्ट किया है । अंजो अभिजाती मध्यवर्गीय अहंवादी घर की प्रमुख है, पत्नी भी है,माँ भी,बहन भी । इसलिए उसकी वेशभूषा उचित ही है । साथ ही शारीरिक बनावट भी ठीक है । पतले छरहरे शरीर की दुर्बल नसोंवाली युवती, उसके मस्तकपर नसें सदा तनीं रहती हैं, अर्थात वह अपनी गृहस्थी में पूरी निष्ठा एवं गंभीरता से जुडी हुई है ।

इंद्रनारायण भी स्थूलकाय है । अप-टू-डेट सूट पहने हैं । पतलून की क्रीज और कोट का कालर लगता है अभी प्रेस किये गये हैं । बातें करते समय कन्धे झटकाने की आदत है । यह विवशता का प्रतीक है । अनिमा एक दर्शक की भाँति तटस्थ संपूर्ण नाटक भर लेस बुनने में ही जुटी रहती है । श्रीपत मस्तानी तबीयत का फक्कड आदमी है । वह पतला-दुबला है मगर कमजोर व्यक्ति नहीं । लम्बा,तगडा और कुछ मोटा,कलाई में कीमती घडी, मुँह में स्टेट एक्सप्रेस का सिगरेट । कीमती सिल्क का कुर्ता और लट्ठे का पाजामा पहने हुए है, किंतु कुर्ते के दो बटन खुले हैं और दोनों कपडे तनिक मैले हो रहे हैं । अर्थात् लापरवाह,फक्कड तबीयत का आदमी है । नीरज-अंजो का बेटा (प्रथम अंक में) दस-ग्यारह वर्षों का बच्चा, नीली बुशशर्ट और सफेद नेकर पहने,सुंदर,सुकुमार और सुसंस्कृत । बाल-सुलभ-चंचलता का सर्वथा अभाव है । अंजो की बहु ओमी बिल्कुल अंजो की प्रतिच्छाया ही है । एक मध्यवर्गीय परिवार के वस्त्र-पहनावा,रहन-सहन का

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.८८ ।

यह चित्रण नाटक के समग्र कथ्य को मूर्तता प्रदान करता है ।

निष्कर्ष --

' अंजोदीदी ' वर्तमान के मूल्यविघटन से उत्पन्न पारिवारिक संत्रासबोध एवं मध्यवर्गीय पारिवारिक तनाव को प्रस्तुत करता है । असल में अंजोदीदी ' में देशकाल वातावरण की कोई गुंजाइश नहीं है, है भी तो केवल मानसिक क्रियाकलापों-द्वारा । पूरा वातावरण १९३३ और मार्च १९४८ के बीच का है । नाटककार अश्क ने वस्तुओं के प्रखरभाव पात्रों की वेशभूषा द्वारा पूरा वातावरण प्रदर्शित किया है । आधुनिक मध्यवर्गीय अभिजात्य परिवार का वातावरण है । मध्यवर्गीय परिवार के रहन-सहन, पहनावा, रस्म-रिवाज, आदर्श आदि का चित्रण नाटक के समग्र कथ्य को मूर्तता प्रदान करता है । पात्रों के परस्पर संवादों द्वारा मानसिक घात-प्रतिघातों एवं अंतर्द्वन्द्व के चित्रण द्वारा नाटककार ने नाटक के इस तत्व को भी पूर्णता प्रदान की है ।

भाषा शैली --

कोई भी साहित्यिक कृति भाषा के माध्यम से ही आकार ग्रहण कर सकती है । भाषा ही वह मूल तत्व है, जो कृति के विचारों को एक स्थानपर लिखित रूप में निबध्द करके उसे अक्षुण्ण बनाती है और रचनाकार के विचारों को जन-समूह में परिव्याप्त करती है ।

' अंजोदीदी ' के पात्र किसी रूढ भाषा का प्रयोग न करके आम फहम अर्थात अपने यथार्थ जीवन में व्यवहृत होनेवाली भाषा का ही प्रयोग करते हैं, परंतु जहाँ भाषागत अश्लीलता का प्रश्न है -- नाटककारने बिन्दु-चिन्हों का प्रयोग करके यत्र-तत्र रिक्तता छोडी है । इससे दो प्रयोजन सिध्द हुए हैं - एक तो अपशब्द की सीमान्त अश्लीलता का प्रत्यक्ष कथन न कर उसे सांकेतिक बना दिया है, दूसरे शब्द के पूरे अर्थ-जगत में मौन की गूँज से दर्शकों-पाठकों को परिचित किया गया है । सबसे

बडी विशेषता इस भाषा की यह है, कि बोलचाल की भाषा होते हुए भी यह एक हरकत की भाषा है। नाटक के प्रत्येक शब्द का सम्बन्ध पात्रों की क्रियाओं के साथ जुडा है - इसलिए कहीं भी संवाद पात्रों से अलग नहीं जान पडते। नाटक के शब्द स्वयं हरकत करते हुए मालूम पडते हैं। यही कारण है, कि प्रत्येक पात्र दर्शक के सामने अपने आप खुल जाता है।

पात्रों की इच्छाओं का दमन, कुढन, उससे उत्पन्न उनकी परिस्थितियाँ, प्रदर्शित करने के लिए ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग मिलता है। 'उमेठ-उमेठकर', 'सिटपिटाये', 'तमतराक से', 'टिक-टिक', इ. शब्द नाटकीय अभिव्यक्ति में सहायता करते ही हैं, साथ ही साथ पात्रों की झल्लाहट प्रस्तुत करते हैं।

'अंजोदीदी' नाटक की भाषा यथार्थ के एकदम निकट होने के कारण 'साहित्यिकता' से एकदम हटकर है। इसमें सरल, स्वाभाविक बोलचाल की भाषा और परिनिष्ठित हिंदी खडी बोली का प्रयोग पाया जाता है। उदा...

श्रीपत - (हँसते हुए) तुम खूब जानती हो दीदी, तुम्हें मखमल के गदेलोंपर नींद न आती थी और हम खुर्री चारपाई पर सो जाया करते थे। तुम्हारे कमरे के पास से भी कोई गुजरे, तो तुम्हारी नींद उचट जाती थी और हमारे कानों के पास ढोल भी बजते तो हमें खबर न लगती। तुम्हारी कसम, मैं तो थर्ड में भी सो जाता, पर भीड कमबख्त इतनी थी कि एकबार जाकर बैठा तो उठकर कमरतक सीधी न कर सका।[1]

नाटकीय भाषाशैली में - १) सरलता, रोचकता, सुबोधता २) प्रवाहमयता ३) पात्रानुकूलता ४) विषयानुकूलता ५) व्यंग्यात्मकता ६) ध्वन्यात्मकता ७) आधुनिक बोध ८) स्पष्टता ९) मुहावरों का शिष्ट प्रयोग।

इन गुणों का होना जरुरी है और जहाँतक 'अंजोदीदी' की भाषाशैली का प्रश्न है, उपर्युक्त सभी गुण उसमें विद्यमान है।

---

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.६८।

१) सरलता, रोचकता और सुबोधता --

' अंजोदीदी ' की भाषा में भाषागत सारल्य के कारण उसमें रोचकता प्रवाहमान है और अपनी सुबोधता के कारण ही वह भाव-संप्रेषण में पूर्ण सक्षम है । उदा....

श्रीपत - ' तो लाइए, चाय पी जाय । मुझे, आप सबकी कसम, सचमुच बड़े जोरों की भूख लगी है । और नहाने में मुझे कम-से-कम एक घंटा लग जायेगा । मेरी आदत है कि या तो मैं नहाता ही नहीं और नहाता हूँ, तो महीनों की कसर एक ही दिन में निकाल देता हूँ । आप सब लोग बैठे रहेंगे मेरे लिए । ' [१]

२) प्रवाहमयता --

' अंजोदीदी ' नाटक में प्रवाहमयता का गुण विद्यमान है । श्रीपत, ओमी, नीरज, नजीर के संवादों में प्रवाहमयता दृष्टिगोचर होती है । उदा...

ओमी - तो क्या बुरा चाहते थे ? समय से उठना-बैठना, खाना-पीना, अपने सारे काम समय से करना और नियम से जीवन जियें ? क्रिकेट के कप्तान तो क्या, जाने अच्छे खिलाडी भी आप बन पाते या नहीं पर ममी आपको जो बने देखना चाहती था, उसके रास्ते पर तो उन्होंने लगा दिया और यदि बहक न गये तो कलक्टर या कमिश्नर होकर भी रिटायर होंगे । ' [२]

३) पात्रानुकूलता --

'अंजोदीदी ' के सभी पात्र शहरी हैं, इसलिए हिंदी-अंग्रेजी-उर्दू मिश्रित शहरी भाषा देखी जा सकती है । उदा...

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - एक मूल्यांकन - सतीशचंद्र श्रीवास्तव - पृ. ६८।

२ - वही - ,, ,, पृ. १३० ।

नीरज - सिटी मेजिस्ट्रेट होकर क्या मैं आदमी नहीं रहा ।

ओमी - तो क्या आदमी का यही गुण है कि वह लोफर हो । जो सभ्य और शिष्ट हैं, वे क्या आदमी नहीं ? पापाजी.....

नीरज - (खाने की मेज के नीचे से कुर्सी घसीटकर उस पर बैठते हुए) तुम पापा की बात बेकार करती हो । पहली बात तो यह है कि वे हाईकोर्ट के जज हैं और जज और सिटी मेजिस्ट्रेट में बडा अंतर है । जब बडी-सी विग लगाये, लम्बा-सा मुँह बनाये, ऊँची सी कुर्सीपर बैठा, वकीलों के बयान सुनता और गहन-गंभीर निर्णय देता है । हाईकोर्ट के उस गंभीर वातावरण में तनिक-सी अशिष्टता या खुलेपन की गुंजाइश ही कहाँ है ? सिटी मेजिस्ट्रेट को नगर भर के गुंडों, चोर बाजारियों, परमिट होल्डरों, सेठ साहूकारों और पुलिसवालों से काम पडता है और कोई भला आदमी उन भले आदमियों के साथ निभा सकता है ? क्यों मौसी ? [1]

उपर्युक्त संवाद में नीरज, ओमी की भाषा में बौध्दिक स्तर का अंतर, साथ ही सफाई, अनुशासन का भाव, उसके प्रति झुंझलाहट दिखायी देती है ।

४) विषयानुकूलता --

इसमें यह गुण पर्याप्त मात्रा में है । जैसा प्रसंग है वैसी ही भाषा प्रयुक्त हुई है । हल्के-फुल्के प्रसंग में भाषा की हल्की-फुल्की, हास्य-व्यंग्यप्रधान हो गयी है । उदा...

नीरज - सुबह से तुम्हारा गणित नहीं हुआ ? पाँच बजने को आये हैं, अब एक-दो घन्टे खेलो, फिर पढ लेना । गदहे की तरह सारा दिन पढाई का बोझा ढोओगे, तो गदहा बन जाओगे ।

ओमी - हाथ, पैर या सिर तुडवा लेगा तो आपको चैन आयेगा ।

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - एक मूल्यांकन - सतीशचंद्र श्रीवास्तव - पृ.१२४ ।

नीरज - (उसकी नहीं सुनता) चलो,चलो, तुम्हें क्रिकेट के खिलाडियों के चित्र दिखायें, फिर कुछ क्षण खेलें ।

ओमी - आप उसे निकम्मा और आवारा बनाकर दम लेंगे ।`[1]

इसमें जो तल्खी है, वह प्रसंग के सर्वथा अनुकूल और प्रभावी है ।

५) व्यंग्यात्मकता --

इसकी कथावस्तु हमारे परिवार की एक सनातन ट्रेजेडी है । माँ-बाप अथवा दूसरे अभिभावकों द्वारा बच्चों की अभिलाषाओं आकांक्षाओं के दमन की कहानी है । इसलिए इसके कुछ पात्र अपने नैसर्गिक रुझान के विपरीत ही अपने जीवन का स्वाभाविक विकास नहीं कर पाये हैं । उदा....

श्रीपत - वाह जीजाजी । ...... कितना हँसते थे आप उन दिनों, कितने ठहाके लगाते थे ।.... जब कि अभी आप एडवोकेट भी नहीं बने... जब एक वकील, जज नजर आने लगे तो समझिए कि वह बुड्ढा हो गया ।`[2]

- सख्त बुरी चीज है । लेकिन कभी-कभी बुरी बात भी कर देखनी चाहिए । बहुत भलाई को भगवान पसंद नहीं करता ।.... तभी तो आज दिन मेरी भलाई उसी तरह बनी है ।

अंजली - (व्यंग्य से) भलाई । क्या बात है तुम्हारी भलाई की । तुम्हीं को मुबारक हो यह भलाई ।`[3]

६) ध्वन्यात्मकता --

कुछ काल पूर्व नाटकीय भाषा इस गुण का स्थान तक नहीं था परंतु नये रचनाकारों को ऐसा लगा कि शब्दों के अर्थ ही महत्वपूर्ण नहीं है, उनकी ध्वनि की भी अपनी एक विशिष्ट अस्मिता होती है । यह शाब्दिक ध्वन्यात्मकता कहीं तो पात्रों

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - एक मूल्यांकन - सतीशचंद्र श्रीवास्तव - पृ.१६३ ।

२ - वही - ,, ,, पृ.७० ।

३ - वही - ,, ,, पृ.

के व्यंग्य को मुखर करती हैं और कहीं वार्तालाप में परस्पर उपेक्षा दर्शाने हेतु भी प्रयुक्त हुई है। अंजली, श्रीपत, ओमी के संवादों में प्रयुक्त भाषागत ध्वन्यात्मकता 'अंजोदीदी' की भावाभिव्यक्ति को अधिक सम्प्रेषणीय एवं सार्थक बना देती हैं। यथा ...

अंजली - बुरा। (कुर्सी पर बैठते हुए हँसती है) बड़े सिर-पिटाये थे पहले पहल।'[१]

अनिमा - उमेठउमेठकर जगाना पड़ता है।'[२]

श्रीपत - (पर्दे के पास से सरककर) श्रीमान राय श्रीपत राय पधारते हैं।'[३]

अंजली - जगाया, ऊँह। (बेजारी से सिर हिलाती है) मैंने तीन बार जगाने का प्रयास किया। एक बार 'ऊँ', 'ऊँ' करके सो गया।'[४]

ओमी - (उठती है) अन्नो मौसी, जरा मदद देना, इस घड़ी को चला दें। इसकी टिक-टिक के बिना कुछ भी ठीक न लगेगा।'[५]

उपर्युक्त रेखांकित शब्दों में ध्वन्यात्मकता का प्रभाव स्पष्ट है।

७) समयबोध --

आधुनिक रफ्तार की जिंदगी में समय को काफी महत्व दिया जाता है। इस युग में जो आदमी समय की नब्ज को पकड़े हुए चलता है, वही सफल होता है। इसमें इस समयबोध का निराकरण अति की सीमा तक अंजली और ओमी द्वारा किया गया है। इस समय बोध को समग्रता प्रदान करने के लिए वैसी ही जीवंत भाषा का प्रयोग किया गया है।

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ. ५७।

२ - वही - ,, पृ. ५६।

३ - वही - ,, पृ. ६३।

४ - वही - ,, पृ. ८२।

५ - वही - ,, पृ. ११२।

अंजली स्वयं कहती है --

`जीवन स्वयं एक महान घडी है । प्रात: संध्या उसकी सुइयाँ है । नियमबध्द एक दूसरी के पीछे घूमती रहती है । मैं चाहती हूँ मेरा घर भी घडी ही की तरह चले` हम सब उसके पुर्जे बन जायें और नियमपूर्वक अपना अपना काम करते जायें ।`

८) स्पष्टता --

आधुनिक नाटक की एक विशेषता यह भी है कि उसकी भाषा स्पष्ट हो । थीम चाहे लाख यथार्थवादी हो परंतु यदि भाषा लिजलिजी, रोमानियत और फैन्तासी से परिपूर्ण है तो नाटक की भाषा संदिग्ध हो जाती है । `अंजोदीदी` में श्रीपत की स्पष्टता से प्रेक्षक अभिभूत हो उठता है । `अंजोदीदी` में न कहीं शब्दों में रंगीन पालिश है और न ही चमत्कारपरक शब्दों की योजना ।

श्रीपत - अरे दीदी । तुम तो व्यर्थ ही गृहस्थी की चक्की से अपना माथा फोड रही हो । तुम्हें तो सेना में कॅप्टन या छोटी-मोटी लेफ्टिनंट हो जाना चाहिए ।`[१]

श्रीपत - मेरे ख्याल में आचार-व्यवहार के सभी कानून कायदे विवाहित लोगों के अधेड दिमागों की उपज है ।`[२]

९) मुहावरों का शिष्ट प्रयोग --

नाटकीय भाषा को जीवंत धरातल प्रदान करने में मुहावरेदार भाषा की भी अपनी एक विशिष्ट भूमिका है । नाटक के कथ्य को अधिक सरल और भावसबल बनाने के लिए मुहावरों का शिष्ट प्रयोग जरूरी है । `अंजोदीदी` के नाटककार इलाहाबाद उत्तरप्रदेश के है, हिंदी भाषी है, अत: हिंदी भाषा में सर्वथा रूढ मुहावरों का ही उन्होंने भाषा में प्रयोग किया है । इस नाटक में प्रयुक्त मुहावरे इस प्रकार है ।

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.६५ ।

२ -वही- ,, पृ.७२ ।

जान खपाना (५४), माथा-पच्ची करना (५८) गये-गुजरे होना (७२) आँख न लगाना (८४) तिलांजली देना (८८) लाख रुपये की बात कहना (१००) झाड़ा की तरह आना और भक्कड की तरह चले जाना (१०२) बात की सुधि न रहना (११३) चूलें हिल जाना (११५), दूध के धुले (१२५) जी का जंजाल बनना (१३७) कान काटना (१५०) आदि । इस संदर्भ में कुछ वाक्य इस प्रकार हैं ---

१) अंजोदीदी अपना प्रतिनिधि छोड गयी है, जो बातों में अंजो के भी कान काटती है । [१]

२) कितनी जान खपायी है इसके साथ ... [२]

३) जीजाजी रात पलभर के लिए भी आँख नही लगी । [३]

४) क्या तिलांजली दे दी जीवन के रस-रंग को आपने । [४]

५) इस घर की तो जैसे चूलें हिल गयी है मौसी । [५]

भाषाशैली --

अंजोदीदी में आधुनिक अभिजाती, मध्यवर्गीय परिवार की कथा होने के कारण इसमें परिनिष्ठित हिंदी साथ ही उर्दू, अंग्रेजी, पंजाबी शब्दों का प्रयोग हुआ है । यह प्रयोग नगरीय व्यक्तियों की बोलचाल का एक प्रामाणिक दस्तावेज है ।

अ) हिन्दी के तत्सम शब्दों का प्रयोग

१) अब गर्जमंदों और जरूरतमंदों का ध्यान करें । मैंने इन सब लुदाई फौजदारों के तगादों का एक ही हल निकाल रखा है । [६]

२) कोई फंड नहीं, कोई सनक नहीं । [७]

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.१४९
२ - वही - ,, ,, पृ.५४ ।
३ - वही - ,, ,, पृ.८४ ।
४ - वही - ,, ,, पृ.८८ ।
५ - वही - ,, ,, पृ.११५ ।
६ - वही - ,, ,, पृ.१२१ ।
७ - वही - ,, ,, पृ.१३४ ।

ब) हिन्दी के तद्भवशब्दोंका प्रयोग

इसमें बहुत ही कम हुआ है ।

क) देशज शब्दों का प्रयोग --

इसमें देशज शब्दों का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में हुआ है, जिससे नाटकीयता में प्रभविष्णुता आयी है । उदा....

गँवार, सुण्ड, देहरी, अछूत, डकारना, गच होना आदि ।

ड) सुसंस्कृत वचनों का प्रयोग --

इससे पात्रों का चरित्र-चित्रण झलकता है । यथा ---

१) समय-निष्ठा सभ्यता की पहली निशानी है । [१]

२) सुघडापा-स्त्री का गहना है और सदाचार पुरुषा का । [२]

३) भिन्नता जीवन का रस है । [3]

४) उम्र तमाम हो, पर उम्र तमाम होने का खेद न रहे । [४]

इ) कवित्व गुण की मात्रा --

उपेंद्रनाथ अश्क कवि है । अत: नाटक की मनोरंजकता के लिए फक्कड श्रीपत के मुँह में उन्होंने शेर डाले है, जो बिल्कुल ही प्रभावी, मनोनुकूल, सटीक है । उदा...

१) संतोष तो हो जाता, आशा तो उमग उठती
'देते तो वचन चाहे, करते न वचन पूरा।' [५]

२) हम यायावर, हम क्या बोलें,
कब हाथ बढे, कब पाँव उठे । [६]

३) इंद्रनारायण --
'सुबह होती है शाम होती है,
उम्र यों ही तमाम होती है ।' [७]

---

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्याकन - पृ.५४ ।
२ -वही - ,, ,, पृ.५७ ।
३ -वही - ,, ,, पृ.९९
४ - वही - ,, ,, पृ.१६६ ।
५ - वही - ,, ,, पृ.६६ ।
६ - वही - ,, ,, पृ.१६५ ।

ई) बिन्दुचिन्हों का प्रयोग --

नाटक में अर्थव्यंजना को अधिक भास्वर बनाने एवं सीमांत अश्लीलता, झुंझलाहट, मानसिक उद्वेग, वार्तालाप में त्वरा लाने के लिए बिंदु चिन्हों का प्रयोग किया गया है । यथा --

१) अंजली (सहसा मुड़कर) है.... ऐं.... ऐं..... ।`

२) अनिमा - वह आया तो मैं समझी तुम्हारे ससु ...
(घबराकर) कि जीजाजी के पिता.... (बेतरह घबराकर)
कि.... कि.... तुम्हारे कोई बुजुर्ग हैं ।`

उ) उर्दू शब्दों का प्रयोग ---

नाटक में मध्यवर्गीय वातावरण होने के कारण जन-सामान्य भाषा है, अत: उसमें उर्दू शब्दों की बहुलता है । इसमें ` नजीर ` को छोड़कर बाकी सभी पात्र हिंदू हैं, फिर भी वे उर्दू शब्दों से प्रयुक्त हिंदुस्थानी जबान बोलते हैं, जिससे नाटक के कथ्य को सम्प्रेषित करने में पूरी-पूरी सहायता मिलती है । यथा.....

` चिलमची, बदतमीज, लिहाफ, तमतराक, [illegible], [illegible], हुजूर,
नादिरशाही हुक्म, पेचिश, बरखुरदार, बाकायदगी, गिलाफ आदि ।

ऊ) अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग --

भाषा को सम्प्रेषणीय बनाने एवं जीवन के यथार्थ स्तर तक पहुँचाने के लिए, कथ्य को अधिक जीवंत बनाने के लिए वाक्यों में यत्र-तत्र अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग हुआ है । वाक्यों में ही नहीं, स्वयं नाटककार ने रंगमंच संकेतो में भी ऐसे शब्दों का प्रयोग खुलकर हुआ है -- यथा....

साइड-बोर्ड, क्लाक, कोच, टॅाक्स-स्टॅण्ड, डॅडी, टॅायलेट, प्रेस, मॅजिस्ट्रेट, ॲडव्होकेट, प्रापर्टी, मेट्रन, रेफ्रिजरेटर आदि ।

समग्रत: यही कहा जा सकता है कि ` अंजोदीदी ` के कथ्य को यथार्थ रूप में पाठकों-दर्शकों तक सम्प्रेषित करने में अश्कजी की भाषाशैली का अपूर्व योगदान है ।

निष्कर्ष --

` अंजोदीदी ` की भाषा शैली उत्कृष्ट है । किसी भी रूढ भाषा का प्रयोग न करके आमफहम अर्थात् अपने यथार्थ जीवन में व्यवहृत होनेवाली भाषा का प्रयोग है । सरलता, रोचकता, सुबोधता, प्रवाहमयता, पात्रानुकूलता, विषयानुकूलता । व्यंग्यात्मकता, ध्वन्यात्मकता, आधुनिक समय बोध, स्पष्टता, मुहावरों का शिष्ट प्रयोग आदि सभी गुण उसमें विद्यमान हैं । सभी पात्र शहरी हैं, इसलिए हिंदी-अंग्रेजी-उर्दू मिश्रित शहरी भाषा देखी जाती है । हिंदी के खडीबोली के अंतर्गत हिंदी के तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों का प्रयोग है । नाटक की भाषाशैली कथ्य को यथार्थरूप में पाठकों-दर्शकों तक सम्प्रेषित करने में भाषाशैली का अपूर्व योगदान है । सुसंस्कृत वचनों का प्रयोग, कवित्व गुण की मात्रा, बिंदु चिन्हों का प्रयोग, अंग्रेजी, उर्दू शब्दों के प्रयोग से भाषा शैली जीवंत है । नाटक की भाषा की सबसे बडी विशेषता यह है कि, बोलचाल की भाषा होते हुए भी यह एक हरकत की भाषा है । भाषाशैली योग्य, यथार्थ के अनुकूल और उत्सुकता पैदा करनेवाली है ।

उद्देश्य --

किसी भी रचना के पीछे स्त्रष्टा का कोई न कोई उद्देश्य अवश्य रहता है । यह उद्देश्य प्रत्यक्ष भी हो सकता है, प्रतीकात्मक या व्यंजित भी । आचार्य मम्मटने काव्य के मूल प्रयोजन को स्पष्ट करते हुए कहा है, कि साहित्य की रचना यश-प्राप्ति, धन-प्राप्ति, व्यवहार-ज्ञान, अमंगल तथ्यों के विनाश, तात्कालिक आनंद प्राप्ति तथा

कान्तासम्मित उपदेश के उद्देश्य से होती है । मम्मट का यह प्रकटीकरण आज के संदर्भ में उतना ही सच्य और ग्राह्य है । उपेंद्रनाथ अश्क के रचना संसार पर भी यह बात लागू होती है ।

यद्यपि किसी भी रचना के पीछे स्वभावनाओं एवं आत्माभिव्यक्ति का प्रकाशन ही लेखक का मुख्य उद्देश्य होता है, किंतु साथ ही वातावरण, समाज और परिस्थितियों के आधारपर अपनी भावनाओं को अभिव्यक्ति देने के लिए वह कोई न कोई आधार ग्रहण करता है । उपेंद्रनाथ अश्क अपने जीवन में अनेक अनुभवों से गुजरे हैं, अत: उनकी हर कृति में अनुभवों की प्रांजलता, स्पष्टता, वैविध्यता मिलती है । अश्क नारी को शक्तिस्वरूपा मानते हैं इसलिए उनके काफी नाटक नारीप्रधान हैं । युगीन संदर्भों से जुडकर उनका नाटककार यथार्थ में उतरता है । आधुनिक मध्यवर्गीय गहमागहमी से वे भलीभाँति परिचित हैं, इसलिए उनके अधिकांश नाटक मध्यवर्गीय परिवेश से सम्बन्धित हैं । मध्यवर्ग जो पुराना नहीं छोडना चाहता और नया अपनाना चाहता है, जो सांस्कृतिक संक्रमण का शिकार बन गया है । पूरा नाटक स्वीकार का नाटक है । इसका हल है, विकल्प है । इसमें जो उद्देश्य है, इसके पीछे कुछ महत्वपूर्ण बातें भी सम्बन्धित हैं । उनका विवेचन करना भी जरूरी है ।

1) व्यक्तिस्वातंत्र्य की अपूर्व चेतना --

अस्तित्ववादी विचारधारा के साथ ही व्यक्ति के मतों को एक नयी राह मिली । और वह व्यक्तिस्वातंत्र्य की खुली एवं उन्मुक्त पगडंडियोंपर विचरण करने लगा ।

नवीन युग की अपूर्व उपलब्धि - वैज्ञानिक चिंतन के परिप्रेक्ष्य में व्यक्तिवाद का विकास हुआ । व्यक्तिवादी चिंतन का मूलाधार ' अहम् ' स्वीकारा गया । आधुनिक हिंदी नाटकों में ' समाज साध्य और व्यक्ति साधन ' के स्थानपर ' नवीन जीवन-दर्शन ' की पृष्ठभूमि में विकसित ' व्यक्ति साध्य और समाज साधन ' की विचारधारा के मूल्य का उत्तरोत्तर निरूपण हो रहा है । व्यक्तिवादी चिंतन का मूलाधार ' अहम् ' स्वीकार किया गया है किंतु भारतीय विचारधारा में लोकोत्तर भाव के लिए आत्मा एवं चेतना के विकास के निमित ' अहम् ' की उपासना की गयी,

परंतु साम्प्रतिक पाश्चात्य-चिंतन के परिणाम-स्वरूप ` व्यक्ति के अहम् ` की मूल प्रवृति समाज, संस्कृति और ईश्वर के प्रति विद्रोह-भावना का प्रदर्शन है । इसी कारण परंपरागत सामाजिक मूल्यों में विघटन की स्थिति उत्पन्न हो रही है । ` १

` अंजोदीदी ` का अखंड अहं यह है, कि हर काम उसके मुताबिक समयपर होना चाहिए । नियमबध्दता, बलपूर्वक लादे गये नियम और अनुशासन अधिक समयतक नही चल सकते । विनोद रस्तोगी का ` नाटक ` ` बर्फ की मीनार ` का एक प्रमुख पात्र मिसेज चार्ल्स का प्रतिरूप है -- अंजोदीदी । जो जीवन को एक व्यवस्थित रूप से चलाना चाहती है । वह चाहती है कि उसका घर उसी के ही इशारेपर चलें । और अपने अहम् को वह बहुत बढावा देती है । इसमें वह पूरीतरह कामयाब होती है, इतना ही नहीं मरने के बाद भी उसके अहम् का घेरा इतना विस्तृत रहता है कि उसकी बहु ओमी उसी की ही जीवनपध्दति का अनुसरण करती है और यहीं इस नाटक का चरमोत्कर्ष है । चोरी-छिपे इंद्रनारायण का कचहरी में शराब पीना, जब अंजो को पता चलता है, तो वह अपने अहम् को नहीं मारती बल्कि स्वयं अपने अहम् की रक्षा के लिए आत्महत्या करती है ।

व्यक्ति-प्रतिष्ठा की संघर्षपूर्ण दौडमेंनारी ने पुरूष को कहीं-कहीं पीछे धकेल दिया है । आर्थिकता, शासनाधिकार इ. में नारी अब पुरूष से भी शक्ति - शाली है । ` अंजोदीदी ` भी घर के कुटुंबप्रमुखों के सारे अधिकारों का प्रयोग बडे ही उदारतासे और स्वइच्छाओं के अनुरूप चलाती है । पति इंद्रनारायण जैसे पुरूष न चाहते हुए भी ` जोरू का गुलाम ` बनने की पीडा सहते है । इतना ही नहीं सामान्य व्यवहार भी अंजो की नजर में सही लगेंगे या नहीं, इसका हमेशा ध्यान रखते हैं । जहाँ एक ओर व्यक्ति-प्रतिष्ठा का बोलबाला हुआ वहीं इसके प्रति से भी मूल्य-विघटन और व्यक्ति-विघटन की समस्या भी हुई ।

व्यक्ति-प्रतिष्ठा का एक दूसरा पहलू है - मस्त कलंदर श्रीपत । श्रीपत की व्यक्ति-प्रतिष्ठा की मान्यता सर्वोपयोगी होने के साथ ही वैयक्तिक जरूर है । श्रीपत

---

१ डॉ. गिरिराज शर्मा - गुंजन -
हिंदी नाटक - मूल्य संक्रमण - पृ. ७३-७४ ।

की मान्यता यह है कि,आदमी को अपने मन के अनुसार चलना चाहिए । अपने मन को किसी के साथ चलकर नहीं चलना चाहिए । अपने तर्कपूर्ण शब्दोंद्वारा वह पूरे नाटक में एक स्वीकार्य पात्र बन जाता है । आधुनिक मध्यवर्गीय चेतना का एक पहलू है ।

२) <u>मध्यवर्गीय चेतना --</u>

मध्यवर्ग समाज की रीढ है । इसमें भी उच्च मध्यवर्ग, मध्य मध्यवर्ग, निम्न मध्यवर्ग आदि प्रकार हैं । `अंजोदीदी` एक अभिजात्यवर्गीय परिवार है अत: इसका समावेश उच्चमध्यवर्ग में होता है । समकालीन परिवेश की असंगतियों से जुडी मध्यवर्गीय चेतना ने व्यापक,परंतु बदलते सामाजिक संदर्भों की पीडा को झेला है । विधि-निषेधों की बौनी परंपराओंने व्यक्ति-स्वातंत्र्य की चेतना को कैद कर रखा था । इन्हीं मूल्योंकी कश्मकश्म मेंमध्यवर्गीय चेतना जीवन-संगत की सही पहचान पाने को आकुल है । मध्यवर्गीय चेतना आज राजनीतिक छल-कपट, लिजलिजी विवशताओं के यथार्थ,पीढी-संघर्ष,वैवाहिक मूल्यों के प्रति नवीन चेतना, स्त्री,पुरुष सम्बन्धों की खुरदरी त्रासदी,संशोधित मनु संस्कृति के द्वन्द्व,आधुनिक दाँव पेचों में उलझी बेमौसम जिंदगी की विसंगतियों से ढकी खतरनाक दल-दल में परिवर्तित हो गयी है । संबंधों के रेशमी जाल अंतर्विरोधी चक्रव्यूह बनाम शिक्षा और संस्कारों की टकराहटों के कारण विचारों की गलत धुरी से बँध गये हैं । अर्थतंत्रपर संक्रमित मध्यवर्गीय चेतना जंग खाए पुर्जे की भाँति मशीनी सभ्यता की भागमभाग में शामिल है । घर-दफ्तर,चख-चख, किट-किट... सलीब-सी लटकी युवा पीढी के अनकहे दर्द को अर्थ यंत्रणा से जोडती है । एक खासतरह के मनोविज्ञान से पीडित यह चेतना समाज की बेमेल खिचडी है, जिसका गिरगिटी रुप-रंग इनको समझौता परस्त चरित्रों में ढाल देता है ।`[१]

`अंजोदीदी` में एक अभिजात्य परिवेश है, जो सामान्यत: उच्चवर्ग में पाया जाता है । उपर्युक्त सभी बातें अंजोदीदी ` में पायी जाती हैं । मध्यवर्गीय चेतना

१

१ डॉ.वीना गौतम - आधुनिक हिंदी नाटकों में मध्यवर्गीय चेतना ।

जो पुराना भी नहीं छोडना चाहती और नया भी अपनाना चाहते हैं । सांस्कृतिक संक्रमण से गुजर रही है । इसका भी चित्रण ' अंजोदीदी ' में है । यांत्रिकता के खौफनाक माहौल में अंजोदीदी के परिवार की जिंदगी बँधी बँधाई है । सभ्यता और अनुशासन नियमबध्दता से सभी सदस्य अपनी स्वाभाविक जिंदगी को खो चुके हैं। ' श्रीपत ' इस माहौल को भंग कर ध्वंसक रुप को उभारकर अपने पोते नीरज और नीलम को सजग करता है ।

३) सनक-अति की सीमा --

' अंजोदीदी ' में अंजो अपने नानाजी से पाये गये आचार-विचारों को अपने जीवनादर्श बनाती है, जो सर्वव्यापक ,सर्वकालिक नहीं है । अंजो का कहना है ---

' जीवन स्वयं एक महान घडी है । प्रात: संध्या उसकी सुइयाँ हैं । नियमबध्द एकदूसरी के पीछे घूमती रहती हैं । मैं चाहती हूँ मेरा घर भी घडी की तरह चले । हम सब उसके पुर्जे बन जाये और नियमपूर्वक अपना अपना काम करते जायें ।'[१]

' अंजोदीदी ' की यह सनक वास्तव में उसकी तानाशाही और आतंक ही है जो उसके संसर्ग में आनेवाले समस्त पात्रों पर हावी है । अंजो के व्यक्तित्व में बध्दमूल दमन और सनक की मनोवृत्ति का अंतरंग सम्बन्ध उसके उद्दाम अहं से है । उसकी इस सनक का अंत आखिर उसे ही आत्मघात करने पर मजबूर करता है । उसकी यह नियमबध्दता जो सनक तक पहुँच जाती है सारे नाटक में एक अजीब-सा घुटन-सा माहौल पैदा करती है । नियमों के ढाँचे में ढले ये जीवन-मूल्य परिवार के अन्य सदस्यों के लिए लोहे की बेडियाँ बन जाते हैं । अंजो के पति के शब्दों में मुक्ति की छटपटाहट दृष्टिगत होती है --

' जरा-सी गलती पर अपनी सनक में तुमने पाँच बरस रेगिस्तान बना डाले अंजो, मैं तुम्हें क्या कहूँ । इस कमरे पर बरसों से तुम्हारा जादू भारी है । लेकिन श्रीपत ठीक कहता है - यह जादू टूटना चाहिए, इस घर को घडी की तरह नहीं, इन्सानों की तरह जीना चाहिए । '[२]

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - पृ.५७ ।

२ - वही - ,, पृ.१७१ ।

` श्रीपत अपने फक्कडपन से अंजो के घर की सब विसंगतियाँ, व्यवस्था के आग्रह और समय के शासन को स्वीकार कर अपनी तरह चाहनेपर मजबूर करता है। वह इतना विनीत नहीं जो जीवन में सबकुछ स्वीकार करता चले। `[१]

४) <u>परंपरागत मूल्य - विघटन की प्रक्रिया --</u>

साम्प्रतिक युग में व्यक्तिस्वातंत्र्य की अपूर्व चेतना ने परंपरागत पारिवारिक मूल्यों में विघटन की स्थिति उत्पन्न कर दी है। पुरानी और नयी पीढ़ी का वैचारिक असामंजस्य भी उत्पन्न हो गया है। `[२]

अश्क की ` अंजोदीदी ` अपने नाना से विरासत में मिले हुए विचारों को अपने पति एवं बच्चोंपर थोपना चाहती है। खलील जिब्रान ने कहा है कि बच्चों को सबकुछ दो पर अपने विचार मत दो। `[3] दूसरों पर व्यक्तिगत विचारों का आरोपन अपने आप में एक नैतिक पाप भी है। इसके विपरीत परंपरा रुप में अंजो नीरज को अपनी तरह बनाना चाहती है। और आगे जाकर नीरज भी अपने पुत्र नीलम को अपनी इच्छानुसार ढालना चाहती है। नैतिक पाप की यह परंपरा दोनों पीढ़ियों में चलती है।

केवल व्यक्तियों और मान्यताओं के संघर्ष से वर्गीय यथार्थ की आत्मा जैसे मुखर हो उठी है और उनके रहन-सहन, अतिशय पाबन्दी, नियंत्रण आर मशीनी सोच की सारी व्यवस्था साकार हो उठती है। अन्ना के रेनिना की प्रथम पंक्ति सहसा यहाँ याद आती है ---

" Happy families are all a like, every unhappy family is unhappy in its on way "

` इसी यथार्थ को अंजो की सनक और परिवार की ट्रेजेडी में गुंथकर अश्कजी ने निश्चय ही कलात्मक सिध्दि प्राप्त की है। `[४]

---

१ डॉ. गिरिराज शर्मा ` गुंजन ` - हिंदी नाटक - मूल्य संक्रमण -पृ. ८८-८९।

२ - वही - ,, ,, ,,

3 - वही - ,, ,, ,,

४ कमलेश्वर - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन (अंजोदीदी नाटक से उध्दृत)

५) दाम्पत्य जीवन की समस्या --

आधुनिक दम्पतियों में व्यक्ति स्वातंत्र्य की उध्दाम लालसा के उत्तरोत्तर विकसित होने के परिणाम स्वरुप परंपरागत दम्पतियों के जीवनमूल्यों के प्रति अस्वीकृति के स्वर मुखरित हुए हैं । 'अंजोदीदी' में दाम्पत्य जीवन की समस्या का चित्रण है । अंजो अपने व्यक्तिगत विचारों को अपने पति इंद्रनारायण पर थोपना चाहती है । इंद्रनारायण भी उसके अनुसार ही ऊपरी भाव से चलकर जिंदगी से समझौता करते हैं । आरोपित जीवन का खिंच पाना उन्हें दुरुह लगता है । एक जगह वे स्वयं कहते हैं --' जरा-सी गलतीपर अपनी सनक में तुमने मेरे पांच बरस रेगिस्तान बना डाले अंजो, मैं तुम्हें क्या कहूँ । इस कमरे पर बरसों से तुम्हारा जादू भारी है, लेकिन श्रीपत ठीक कहता है, यह जादू टूटना चाहिए, इस घर को घडी की तरह नहीं, इन्सानों की तरह जीना चाहिए ।'[१]

स्त्री-पुरुषा के अहं एवं अधिकार और परस्पर सम्बन्धों में दरारों का होना जायज नहीं है । अंजो के पति इंद्रनारायण अपनी पत्नी के आरोपित विचारों का खुलकर विरोध करने में असमर्थ है; इसलिए मन ही मन कुंठित है । अपने पति इंद्रनारायण का शराब पीना अंजो के अखंड अहं को ठेस पहुँचा देता है । अपने व्यक्तिगत विचारों की वह इतनी कायल है, कि उनका उल्लंघन परिवार के किसी भी सदस्य द्वारा होनेपर भी वह तिलमिला जाती है । इंद्रनारायणजी अपने विवाह से ही अंजो के गिरफ्त में आ गये है, अत: दब्बु प्रकृति के हो गये हैं । इन दोनों के बीच संघर्ष है मगर वह मुखरित नहीं है, मानसिक है जिसका परिणाम बुराई के सिवा और कुछ नहीं हो सकता ।

जीवन में सफाई और नियमबध्दता बुरी चीजें नहीं है, पर अति की सीमापर पहुँच कर अच्छी चीजें भी बुरी लगने लगती है । नाटककार घटनाओं के चक्रव्यूह में अपने उद्देश्य को इसप्रकार छिपाये रहता है कि वह कहीं भी मुखरित नहीं होता, सिर्फ ध्वनित होता है - व्यंजित होता है, अत: उसके उपकरण भी

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.१७१ ।

`प्रतीकात्मक` हैं। जिन्हें समझाने के लिए थोडी समझदारी और श्रम की अपेक्षा है। उदा. जब अंजोदीदी के काल में ही श्रीपत घर से जाने के बहाने वकीलसाहब को दिलकुशा ले जाता है, तब भी घडी खराब होती है। नाटक के अंत में जब श्रीपत वकील साहब को पुन: शराब पिलाने को असफल चेष्टा करता है, तो फिर घडी खराब होती है। प्रतीक रूप में घडी की चाभी केवल अंजोदीदी के उस दमन को व्यंजित करती है जो उस घरपर छाया है और उसका खराब होना मानो उस व्यवस्था की द्योतक है और स्वयं श्रीपत एक उपकरण है जो कार्यावस्थाओं और अर्थ प्रकृतियों में एक संधि का काम करता है। अर्थात् वह ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा पारिवारिक दमन और समक के विरुध्द लेखक अपने विचार व्यक्त करता है।[1]`

नाटक का एक दूसरा मनोवैज्ञानिक उद्देश्य यह भी है, कि हमारे परिवार की एक सनातन ट्रेजेडी यह है कि माँ-बाप अथवा दूसरे अभिभावकों का बच्चोंपर अपने विचार, जीवनादर्श, नियामक मानदंड लादना नैतिक अपराध है। इससे बचने का संकेत नाटककार देता है। और उसमें वह पूरीतरह कामयाब होता है।

नाटककार की सफलता इस बात में है, कि वह क्रूर और असंगत रूढिपर चोट करता है, हमें वास्तविकता का प्रत्यक्ष रूप में बोध करता है। अश्क ने नाटक में समस्या को केवल उखाडकर रखा ही नहीं वरन् उन्होंने उसका समाधान भी श्रीपत के द्वारा किया है।

६) असमान अर्थनीति - राजनैतिक भ्रष्टाचार - उत्कोच --

`अंजोदीदी` में नीरज और नजीर के माध्यम से यह समस्या स्पष्ट की है। नीरज आज के भ्रष्टाचार पर कटू व्यंग्य कहते हुए कहता है कि - `कोई भला आदमी सफल मेजिस्ट्रेट या कलक्टर नहीं हो सकता।`[2] आजकल उत्कोच और अँप्रोच के सिवा कोई काम नहीं कर सकता। साथ ही स्वतंत्रता के बाद कांग्रेसी मिनिस्टरों के विषय में नीरज का कहना है -` जिनको पहले कोई साठ रुपये में भी न पूछता था, जिन

१ गोपालकृष्ण कौल - नाटककार अश्क - अंजोदीदी - पृ.२३४।
२ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.१२५।

वकीलों की चार रुपये रोज की प्रॅक्टिस न थी, वे आज कल मिनिस्टर बने हुए हैं ।'[१] साथ ही अंग्रेजी अधिकारी चले जानेपर भारतीय अधिकारी प्रतिष्ठित हुए । जिन लोगों ने प्रोन्नति का सपना भी नहीं देखा था, वे बडी आसानी से प्रोन्नत हुए । इसी तथ्य की ओर संकेत करते हुए नीरज कहता है --' फिर मेरे जैसा नायब-तहसीलदार अगर कलक्टर हो जाये तो कौन-सी बडी बात है ।'[२]

अश्क कहना चाहते है, कि शासन के बलपर ऊँचे नहीं चढे है । उन्हें अपने शील और आचरण से अपने को उन पदों के योग्य प्रमाणित करना चाहिए ।'[3]

नाटककार ने बौद्धिक संतुलन, स्वस्थ जीवनदृष्टि और वैज्ञानिक दृष्टिकोण श्रीपत में समाकर नाटक के उद्देश्य को प्रतिफलित किया है । वह कहता है ---' .... घडी मशीन है और इन्सान मशीन नहीं । जब इंन्सान मशीन बन जायेगा तो वह दिन दुनिया के लिए सबसे बडे खतरे का दिन होगा । इन्सान का मशीन बनना सनक का ही दूसरा रूप है । अंजो यदि इसे समझाती तो जीजाजी को चोरी से शराब पीने और उसे मरने की जरुरत न पडती... ।'[४]

और अंत में नाटककार ने इंद्रनारायण के शब्दों में आदर्श और यथार्थ का समन्वय किया है जो बहुत ही प्रभावशाली और नाटक को ऊँचा उठा देता है ।

' नहीं भाई, मैं पी नहीं सकता । जाने जीवन कितने दिन और है, क्यों इन चंद दिनों के लिए उसकी आत्मा का क्यों कष्ट दूं । लेकिन तुम पियो, मौज करो, इस कमरे का जादू तोडो । हँसो, शोर मचाओ, जिओ ।'[५]

इस प्रकार नाटक का उद्देश्य व्यंजित होता है जो एक कलाकार का गुण है ।

---

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.१२६ ।
२ - वही - ,, ,, पृ.१२७ ।
३ डॉ. विनयकुमार - अंजोदीदी - हिंदी के समस्या नाटक - पृ.३०० ।
४ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.१७० ।
५ - वही - ,, ,, पृ.१७२ ।

निष्कर्ष --

कोई भी रचना निरुद्देश्य नहीं होती । रचना के पीछे उद्देश्य होते हैं । 'अंजोदीदी ' नाटक का उद्देश्य व्यंजित है, नाटककार अश्कजी ने इसे कहीं मुखर नहीं किया है । नाटककार ने बौध्दिक संतुलन, स्वस्थ जीवनदृष्टि और वैज्ञानिक दृष्टिकोण ' श्रीपत ' में समाकर नाटक के उद्देश्य को प्रतिफलित किया है । पूरा नाटक स्वीकार का नाटक है । इसका हल है, विकल्प है । नाटककार ने कहलाया है -- ' घडी मशीन है और इन्सान मशीन नहीं । जब इन्सान मशीन बन जायेगा तो वह दिन दुनिया के लिए सबसे बडे खतरे का दिन होगा । इन्सान का मशीन बनना सनक का ही दूसरा रूप है । अंजो यदि इसे समझाती तो जीजाजी को चोरी से शराब पीने और उसे मरने की जरुरत न पडती । '[१] इसके अलावा नाटककारने व्यक्तिस्वातंत्र्य की अपूर्व चेतना, मध्यवर्गीय चेतना, सनक, परंपरागत मूल्य-विघटन की प्रक्रिया, दाम्पत्य जीवन की समस्या, असमान अर्थनीति, राजनैतिक भ्रष्टाचार उत्कोच आदि समस्याओं के द्वारा उद्देश्य को प्रतिफलित किया है ।

मंचीयता --

नाटक को ' पंचमवेद ' कहा जाता है । भरतमुनि ने इसे ' नाट्यवेद ' की संज्ञा दी है । नाटक सभी कलाओं का सुशिल्पित समाहरण-समुच्चय है । यह दृश्यकाव्य और श्रव्यकाव्य भी है । नाटक परकाय-प्रवेश विधान है । भारतीय दृष्टिकोण में नाटक पुरुषार्थ-चतुष्टय से बध्द है । सभी साहित्य विधाओं में सर्वश्रेष्ठ नाटक है । ' काव्येषु नाटकं रम्यम् । '[२] दार्शनिक दृष्टि से इस जगत को मंच ब्रह्मा को नाटककार और जीव को अभिनेता माना गया है ।

---

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.१७० ।

२ निशांत केतु - नाटक और मंच (चिंतन, परिचर्चा और समीक्षा) पृ. ...

आधुनिक दृष्टि से --

१) नाटक मंच से जुडा है । नाटक का तात्पर्य ही है मंचित या मंचनीय नाटक । हर नाटक का अपना एक मंच होता है, यह मंच हर युग के साथ बदलता रहता है । प्रस्तुत युग अपनी समृध्दि और विकास, रुचि और आकांक्षा, लोकप्रवृत्ति और प्रयोग-प्रतीक के अनुकूल मंच प्रस्तुत करता है। युग को घटना-शृंखला, पात्र, रस और संदेश में परिवर्तन करने का अधिकार नहीं है, किंतु वह मंच की आकृति और मंचन की प्रविधि में परिवर्तन अवश्य करता है ।

२) नाटक के निकष काव्यशास्त्र या नाटयशास्त्र के सिध्दान्त नहीं, वरन प्रेक्षागृह में बैठे सहृदय सामाजिक दर्शक होते हैं ।

३) नाटक जीवन का सामीप्यीकरण है । यह स्वाभाविकता का प्रतिबिंबन और सत्यवस्तु का सत्याभिनय भी है ।

४) नाटक एक संघ-व्यापार भी है । नाटक समूह के लिए समूह की कला है । इसमें नाटयलेखन, नाटय निर्देशक, अभिनेता, अभिनेत्री, प्रकाश व्यवस्थापक, मंच-संचालक, गेट-कीपर, पर्दा खींचनेवाले, रूप सज्जा करनेवाले और सैकडों हजारों दर्शकों के एक साथ मिलनेपर मंचन का संयोग घटित होता है । इसीलिए इसे साहित्य का लोकतंत्र भी कहा जा सकता है ।

५) नाटक एक क्षति-पूर्ति व्यापार भी है । एक ही व्यक्ति जीवन की सभी अनुभूतियों को प्राप्त नहीं कर सकता । वह कभी मंचपर अभिनीत सम्राट और योगी बन जाता है । इस प्रकार नाटक एक आकांक्षापूर्ति कला है । नाटक में संकलनत्रय को बहुत महत्व दिया है । समय की एकता, काल की एकता, स्थान की एकता को 'संकलनत्रय' की संज्ञा दी गयी है । वैज्ञानिक विकास के कारण मंचपर छाया प्रकाश, यवनिका पतन, टेप-रिकार्डेड, विभिन्न ध्वनियाँ, इ. का सहारा लेकर आकांक्षित प्रभाव उत्पन्न किया जाता है ।

६) नाटक साहित्य का निशाचरण है । यहाँ अंधकार को आकांक्षित, प्रकाश में खंडित ,भास्वर,उदभासित या सूर्यप्रभ प्रस्तुत किया जाता है ।

नाटक एक अनुकरणात्मक कला है । अभिनय मूल प्रेरणा का स्रोत जीवन का अनुकरण ही है और अभिनय नाटक का प्राण है । भारत [illegible] के प्राचीन आचार्योंने नाटक के इस अनुकरणात्मक कला-पक्ष की दार्शनिक व्याख्या भी की है । दृश्यकाव्य का विषय-विवेचन भरत मुनिने अपने नाट्यशास्त्र में किया है । उन्होंने काव्य की परिभाषा में नृत्य योज्यम् ` शब्द का प्रयोग किया है कि नृत्य के उपयुक्त । प्रसाद ने इन रंगमंचीय नाटकों का विरोध किया और उनकी प्रतिक्रिया में रंगमंच की उपेक्षा करके साहित्यिक नाटक लिखे । प्रसाद ने नारा लगाया -- " नाटकों के लिए रंगमंच की रचना होनी चाहिए । " और व्यावसायिक रंगमंचों के मालिकों का नारा था --" केवल रंगमंच के लिए नाटकों की रचना होनी चाहिए । " इस प्रकार रंगमंच से हिंदी साहित्यिक नाटक दूर होते गये और उनके बीच एक गहरी खाई होती गयी । प्रसादोत्तर काल के हिंदी नाटककारों ने इस खाई को पाटने का अथक प्रयास किया है, जिसमें अश्क का महत्त्वपूर्ण हाथ है । `[1] नाटक की ` साहित्यिक उत्कृष्टता ` तथा ` अभिनेता ` का कलात्मक समन्वय अश्क ने अपने नाटकोंमें प्रस्तुत किया है । `[2] निर्देशक,अभिनेताओं और लेखक के माध्यम से - सहयोग में अश्कजी को पूरा विश्वास है । ` [3]

अश्क ने ` अंजोदीदी ` : एक संस्मरण ` में यह बताया है कि ` अंजोदीदी ` का मंचन किस प्रकार हुआ । ` अंजोदीदी ` [illegible] । वह ` एमेचर रंगमंच - रंगभूमि ` के मंचपर खेला गया । जो केवल ` अंजोदीदी ` खेलने ही को बनी थी और उसे खेलने के बाद ही खत्म हो गयी । नाटक के मंचित होने में रिहर्सल में काफी तकलीफें हुईं ।

---

१ गोपालकृष्ण कौल - नाटककार अश्क - पृ.४५ ।
२ - वही - ,, पृ.४८ ।
३ - वही - ,, पृ.५५ ।

राज जोशी के निर्देशन में नाटक काफी प्रभावशाली रहा । उसने नाटक की प्रभुविष्णुता कायम रहने के लिए २-३ बातें अच्छी की । संवादों के बीच जो रिक्तता है उसे ॲक्शन से भर दिया गया । जैसे अंबो एक के बाद एक संवाद बोलने के बाद बैठती है, खडी रहती है, प्लेट साफ करती है अथवा नाश्ते का सामान फल या मेवे लाकर मेजपर रखती है । दूसरी बात यह है कि अंबो की चिठ्ठियाँ दर्शकों को ऊबायें नहीं, इसलिए यह किया गया कि अन्नो और श्रीपत ड्राइंग रूप में बैठे रहते हैं । जब अन्नो कहती है -- `जीजाजी को उसने लिखा...` तो अचानक बत्तियाँ बुझ जाती हैं, सामने दरवाजे के पर्देपर ही पार्श्व में मोमबती की सहायता से इसकी व्यवस्था कर ली गयी थी) अंबो चिठ्ठी लिखती दिखायी देती है और लिखते लिखते बोलती जाती है (वहीं मंचपर एक छोटा माइक छिपाकर रख दिया गया था, जिससे उसकी आवाज हाल के अंततक पहुँच सके ।

पहली चिठ्ठी के बाद अन्नो अंधेरे ही में कहती है -- `और मेरे नाम चिठ्ठी में उसने लिखा - और वहाँ पर्देपर चिठ्ठी लिखती हुई अंबो वह चिठ्ठी पढती जाती है । चिठ्ठी लिखकर जहर की गोली खाती है और तडपकर गिर जाती है । तभी मंचपर रोशनी हो जाती है । यह दृश्य काफी प्रभावशाली था ।

राज जोशी ने पात्र - परिचय भी बडे मौलिक ढंग से किया । बडे पर्दे के पीछे उसने सफेद चादरों का एक और पर्दा लगा दिया , जिसके पीछे फ्लैश लाइट का प्रबंध था । जब बाहर का बडा पर्दा उठा तो जोशी की छाया माइक के सामने बाईं ओर खडी थी । तब एक-एक अभिनेता पर्दे के पीछे से गुजरने लगा । जोशी उनके संवादों में से एक दिलचस्प संवाद बोलता और अभिनेता अपनी प्रतिक्रिया मनोरंजक भाव-भंगिमा देते हुए गुजर जाता - `जैसे मुन्नी जब ट्रे लिए हुए गुजरी, तो जोशी ने कहा -- "और यह है मुन्नी -- आओ मुन्नी बैठो - अरे मुन्नी - अब नन्हीं मुन्नी नहीं हो .... बैठो.... बैठो और मुन्नी एकबार पलटकर, लजाकर चली गयी ।

अंत में जब राज जोशी माइक छोडकर आगे बढा तो स्वदेश ने माइकपर कहा -- `और यह हैं श्रीपत मामा - फिर नाना - राज जोशी -- मैं किसी

चीज को सनक की हदतक ले जाने का कायल नहीं - क्यों ? ' और जोशी सिर का झटका इकरार में देता हुआ आगे बढ़ गया । ' १

' अंजोदीदी ' कई बार मंचपर खेला गया । इसमें ध्वनि, प्रकाश और संवादों के माध्यम से पूर्वघटित घटनाओं का बोध कराया गया है । मंच-प्रभाव की दृष्टि से इसके संवाद पात्रानुकूल, सार्थक और प्रभावशाली हैं । आलोच्य नाटक के बारे में मेरा अपना यही कहना है, कि - पूरे नाटक में व्यंजनात्मक ,प्रतीकात्मक उद्देश्य की पूर्ति के लिए, कि सफाई और नियमबध्दता बुरी वस्तुएँ नहीं हैं मगर ये अति की सीमापर पहुँचकर बुरी बनती हैं । किसी भी बात को सनक की हदतक ले जाना ठीक नहीं । साथ ही वैचारिक जुल्म का नतीजा भयंकर भी हो सकता है । इसलिए पूरा नाटक २० वर्षों की अवधि को पार करता है । ' अंजोदीदी ' मर कर अंततक नाटकपर छायी रहती हैं । घडी की टिक-टिक, घडी का चलना, घडी का रुकना... रंगमंच के निकष हैं । मगर इस सघनता में भी सादगी और सरलता है, कि कहीं भी नाटकीयता और आडंबर मौजूद नहीं लगता । इसमें समयबोध के साथ इन्सानी मर्यादाएँ, आकांक्षाओं का एक बोध भी है, जिसे मंचपर नाटक के हरेक पात्र ने बखूबी उभारा है ।

अश्क जी ने इस नाटक में किसी भी तरह की चकाचौंध को अपनाकर रंगमंच के ' अन्तर्हिततत्व ' को पराजित करने का प्रयास नहीं किया । अंजो की सफाई, नियमबध्दता तथा वैचारिक जुल्म को व्यक्त करने के लिए रंग-कौशल का परिचय दिया है । उदा. ' टिक-टिक करती घडी, दर्शनीय साईड बोर्ड, करीने से सजी हुई हर चीज, पर्दों का प्रयोग, साथ ही हरेक पात्र का घुटनभरा दबाव, अन्नो द्वारा श्रीपत को पूर्व घटित बातें बताना, इंद्रनारायणजी का स्वगत ' अंत में इंद्र - - नारायण के कहने के साथ नीरज का अपना गिलास जोर से दरवाजे के बाहर फेंकना तथा दर्शकों की ओर मुडकर आँख का कोना पोंछना, सहज और करुणामय है ।

इसके बाद अभिनय की दृष्टि से ' अंजोदीदी ' की तार्किक समीक्षा

---

१ उपेंद्रनाथ अश्क - अंजोदीदी - एक संस्मरण - पृ. २०५ ।

करेंगे । किसी भी अभिनेय नाटक में निम्नलिखित गुणों का होना अनिवार्य हैं ।

(१) नाटक का कथानक जटिल न होकर सरल हैं ।

(२) उसका आकार संक्षिप्त तथा पात्रों की संख्या कम हो ।

(३) उन में अंको और दृश्यों की ऐसी योजना न हो कि रंगमंच ..... में व्याघात पड़े ।

(४) इसमें अरुचिकर और असंभव घटनाएँ न हो ।

(५) उसमें हास्य-व्यंग्य का सुरुचिपूर्ण सन्निवेश हो ।

(६) उसकी भाषा सरल और प्रवाहमयी हो ।

(७) उसमें किसी गहन दार्शनिक गुत्थी को सुलझाने का प्रयास नहीं किया गया हो ।

उपर्युक्त गुणों के आधारपर `अंबोदीदी` को देखने पर सर्व प्रथम ध्यान कथावस्तु पर जाता हैं । इसमें प्रस्तुत जो कथावस्तु हैं वह सरल और हमारे जीवन से सम्बध्द हैं । किसी भी बात को समक्ष की हदतक पहुँचाना, जीवन को नकारना हैं । साथ ही विचारों को लादना एक नैतिक पाप भी हैं । इसको नाटककारने बड़े, सरल और धार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया हैं ।

नाटक में अंकविधान, दृश्यविधान होकर भी कथानक बिखरा हुआ नहीं हैं बल्कि हरेक अंक और दृश्य में कार्यकारण शृंखला हैं । दो अंक हैं -- पहले अंक के बाद दूसरा अंक - बीस वर्षों के बाद आता हैं । और यहाँ कथा चरमोत्कर्षा की ओर बढ़ने के साथ ही औत्सुक्य भी बढ़ाता हैं ।

पात्रों की संख्या की दृष्टि से इस नाटक में विविधांगी पात्र हैं । नाटक का ज्यादातर कार्यभार अंबो से भी श्रीपत ` पर हैं । हरेक पात्र अपनी पूर्ण मानसिकता से परिपूर्ण हैं । बीस वर्षों के अंतराल में पात्रों का बदलाव नाटककारने योग्य मेकअप एवं वेशभूषा से संयोजित किया हैं ।

इसमें हास्य-व्यंग्य के सुंदर उदाहरण श्रीपत के द्वारा प्रस्तुत किये हैं जो

उसके स्वभाव के अनुकूल है, इसके पीछे व्यंग्य है शिक्षा देनेवाला... दुःखी करनेवाला नहीं। वह कहता है - "तुम्हें तो सेना में कैप्टन या छोटी-मोटी लेफ्टनंट हो जाना चाहिए।"[1] इसीतरह अनेक उदा. हैं जिन्हें यहाँ देना संभव नहीं है। यथा -- श्रीपत - "अरे दीदी। कभी समय नियत करके भी आराम किया जा सकता है।... नाटक के संवादों में पात्रानुकूलता, प्रसंगानुकूलता, व्यंग्य का सहज समावेश है। दूसरी ओर इंद्रनारायणजी का स्वगत कथन - "जरा-सी गलती पर अपनी सनक में तुमने मेरे पांच बरस रेगिस्तान बना डाले अंजो।"[2] नाटक की गहराई, भाव सम्प्रेषणीयता और संवेदनशीलता भरी है, जो कथा को उसकी वास्तविक गंभीरता एवं गरिमा देने में सहायक है।

चूंकि नाटक अभिनय की वस्तु है, इसलिए नाटक में भाव-सम्प्रेषण के लिए भाषा का योगदान भी जरूरी है। "अंजोदीदी" में सरल, सुबोध, स्वाभाविक, रोचक, प्रवाहपूर्ण भाषा है। साथ ही साथ बीच-बीच में वाक्यों का टूटना - अंजो आतंक को स्पष्ट करते हैं। "अंजोदीदी" की भाषा पात्रानुकूल, पात्रों की मनोदशा एवं उनके अंतर्द्वन्द्व अभिव्यक्त करने में सफल है। नाटककारने इसमें समस्या उत्पन्न की है, इसका श्रीपत के द्वारा समाधान भी प्रस्तुत किया है। यह दार्शनिक न होकर वैयक्तिक के साथ कालव्यापी, सार्वजनिक भी हो सकती है।

अभिनेय नाटक में कथा के आदि और अंत पर ध्यान देना जरूरी भी है। नाटक में अंजो का साधिकारपूर्ण, आदेशपूर्ण संवाद ... जिससे नाटक की समस्या शुरू होती है और नाटक का अंत गंभीर परिणाम इंद्रनारायण पर दिखाना हुआ होता है।

प्रथम अंक के अनेक स्थलों की आवृत्ति द्वितीय अंक में हो गयी है, इसके पीछे नाटककार का एक जागरूक, कलात्मक प्रयास है। जिसके द्वारा उसे एक विशिष्ठ नाटक का निदान भी एक त्रासदी के रूप में ही होता है। "अंजोदीदी" संकलनत्रय

---

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ.६५।

२ - वही - ,, ,, पृ.१७१।

3 - वही - ,, ,, पृ.४१।

की कसौटी पर पूरा नहीं उतरता । २० वर्षों की अवधि और समय की एकता, दो विभिन्न बातें हैं। परंतु यह टेकनीक के कारण हुआ है । किंतु फिर भी नाटक का प्रभाव सम्पूर्ण और एकाग्र रूप से पडता है । `संकलनत्रय` के सिध्दान्त, अर्थ और प्रयोग में स्वयं विद्वानों में भी बडा मत-वैभिन्य है । हाँ । प्रभाव की एकता या `यूनिटी ऑफ इम्प्रेशन` पर सभी जोर देते हैं, जो कि `अंजोदीदी` का सबसे प्रमुख गुण है । `[१]

इसकी अभिनेयता, कम पात्र, कम स्थान और थोडे से उपकरणों को जुटाकर कहीं भी इसका सफल प्रदर्शन किया जा सकता है । हास्य-व्यंग्य और विनोद की मात्रा तो इसमें इतनी अधिक है कि दर्शक एक बार हँसते हँसते लोटपोट हो जायें । किंतु इसके साथ ही उसके उद्देश्य या प्रभाव में कहीं भी कमी नहीं आयी । इसका सबसे बडा गुण यह है कि दो पृथक् भागों में विभाजित होते हुए भी जो पात्र एकबार प्रारंभ में उठाये गये हैं, बिना किसी काँट-छाँट या परिवर्तन से ही सारी कथावस्तु को इसप्रकार सिल दिया गया है कि उनके बिना जैसे कथानक के वर्तमानरूप की कल्पना नहीं की जा सकती ।

`अंजोदीदी` हास्य और गांभीर्य का संधिस्थल है और अश्क का यह नाटक शीर्ष स्थान पाने का अधिकारी है ।`

निष्कर्ष ---

नाटक को `पंचमवेद` कहा जाता है । नाटक अभिनेय है । अत: रंगमंच नाटक का मूलाधार भी है । इसके अंतर्गत अभिनय, नेपथ्य, संगीत योजना, प्रकाश योजना, पात्रों की वेशभूषा, रंगमंचपर चीजों का रखरखाव आदि सभी बातें आती हैं । इसकी कथावस्तु जटिल नहीं है, सरल है । पात्रों की संख्या कम है ।

---

१ सतीशचंद्र श्रीवास्तव - अंजोदीदी - एक मूल्यांकन - पृ. २३६ ।

हास्य-व्यंग्य का सुसन्तुलित्पूर्ण समावेश है । नाटक में अंकविधान, दृश्यविधान होकर भी कथानक बिखरा हुआ नहीं है । नाटक की भाषा भी भाव को सहजता से सम्प्रेषित करती है । इसकी अभिनेयता, कम पात्र, कम स्थान, थोड़े से उपकरणों को जुटाकर कहीं भी इसका सफल प्रदर्शन किया जा सकता है । 'अंजोदीदी' हास्य और व्यंग्य गांभीर्य का संधिस्थल है ।